परहित सरिस धर्म नहिं भाई

परहित सरिस धर्म नहिं भाई

लेखक

ओमप्रकाश ठाकुर

प्रकाशक

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पत्रालय : शिवानन्दनगरह्लह्व२४९ १९२

जिला : टिहरी–गढ़वाल, उत्तराखण्ड (हिमालय), भारत

www.sivanandaonline.org, www.dlshq.org

प्रथम संस्करण : २०१४
(५,००० प्रतियाँ)

द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी

निःशुल्क वितरणार्थ

'द डिवाइन लाइफ सोसायटी, शिवानन्दनगर' के लिए
स्वामी पद्मनाभानन्द द्वारा प्रकाशित तथा उन्हीं के द्वारा 'योग-वेदान्त
फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल,
उत्तराखण्ड, पिनह्न२४९ १९२' में मुद्रित।
For online orders and Catalogue visit : dlsbooks.org

प्रकाशकीय

इस पुस्तक के लेखक, श्री ओमप्रकाश जी को परहित समर्पित दो दिव्य विभूतियों, परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज एवं परम श्रद्धेय श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को निकट से देखने का परम सौभाग्य उस समय से प्राप्त हुआ जब अभी ये अपनी बाल्यावस्था में ही थे। उनके दिव्य सान्निध्य की अमिट छाप लेखक के हृत्पटल पर आज भी स्पष्ट अंकित है तथा उन मधुर एवं पावन स्मृतियों का लिपिबद्ध रूप ही इस पुस्तक के रूप में आपके समक्ष प्रस्तुत है।

पुस्तक के प्रथम भाग में लेखक ने सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के साथ अपने परिचय के आरम्भ से ले कर, आश्रम के प्रारम्भिक दिन तथा इसके विभिन्न विभागों एवं कार्यों के प्रारम्भ होने के सम्बन्ध में संक्षिप्त वर्णन किया है। साथ ही गुरुदेव के दिव्य व्यक्तित्व को प्रकट करने वाली छोटी-छोटी घटनाएँ अत्यन्त सुन्दर एवं रुचिकर ढंग से लिखी हैं।

पुस्तक का द्वितीय भाग श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से सम्बन्धित है। इसमें श्री स्वामी जी महाराज के आश्रम में आगमन तथा उनकी विभिन्न सेवाओं का वर्णन किया गया है। साथ ही उनके जीवन-काल की ऐसी घटनाओं का भी वर्णन है, जो उनकी महानता एवं दिव्यता को प्रकट करती हुई पाठक को अपने साथ बहा कर ले जाती हैं। दुःखियों के मसीहा, मस्त फ़कीर, मातृप्रेमदाता, त्याग-तपस्या की मूर्ति तथा परहित में सुखी स्वामी जी महाराज के जीवन के हृदयस्पर्शी पहलुओं का वर्णन लेखक

ने अपनी मनोहर भाषा-शैली में इस प्रकार किया है कि वह हृदय की गहराइयों तक उतर जाते हैं।

पुस्तक के अन्त में श्री गुरुदेव तथा श्री स्वामी जी महाराज की शिक्षाओं का सार एवं स्वामी जी का संक्षिप्त चरित्र-दर्शन अत्यन्त मनमोहक रूप में व्यक्त किया गया है।

हमें आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि पाठक-गण इसे पढ़ कर लाभान्वित एवं आनन्दित होंगे।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

ABOUT THE AUTHOR

I am happy to write a few words about Sri Omprakash Thakurji of Haridwar. He is the son of the late Sri Prabhusingh Thakurji. Sri Prabhusinghji was a famous artist and a marble engraver. It was he who built the inner portion of Sri Vishwanath Mandir in the year 1943, Sivananda Pillar in the year 1956 and the sacred Samadhi Shrine in the year 1963. He was very much devoted to Sat Gurudev Sri Swami Sivanandaji Maharaj.

In the mid 1940's, the Ashram ran a primary school. Sri Prabhusinghji admitted his son Sri Omprakashji as one of the students. Somehow, as a student, Omprakashji came in close proximity with worshipful Sri Swami Chidanandaji Maharaj and conceived a special love and regard for him.

As a result of this special love and regard for Pujya Swamiji, and his long association and close contact with him, Omprakashji has felt inspired, to

record some of his reminiscences of Pujya Swamiji, which I am confident that readers will find most interesting and inspiring.

I wish this book a very wide circulation.

Swami Vimalananda

Sivananda Ashram
P.O.: Shivanandanagar-249 192
November 24, 2013

भूमिका

१० मार्च सन् २००० का मध्याह्न काल। ''हमारे घर में दो महिलाएँ आयी हैं'' इसकी सूचना मुझे दी गयी। मैं घर के भीतरी कक्ष में था, वहाँ से बाहर अपनी बैठक में आ कर दोनों महिलाओंसे नमस्कार का आदान-प्रदान हुआ। इनमें से एक अमेरिकन महिला थीं (मिस कैरोल, भारतीय संन्यास नाम स्वामी करुणा प्रेमानन्द) जिनसे मैं पूर्व परिचित था, दूसरी महिला मेरे लिए अपरिचित थीं, उन्होंने अपना परिचय 'आभा सूचक' के रूप में दिया। परन्तु अपरिचित होते हुए भी यह नाम मेरे लिए परिचितों से अधिक था। श्रीमती डा. आभा सूचक की कृपा का प्रसाद मुझ तक बहुत पहले पहुँच चुका था, एक दुर्लभ औषध के रूप में। इस प्रकार दोनों ही परिचित तथा हमारे लिए सम्माननीय महिलाएँ थीं।

पधारने की कृपा करने के लिए मैंने उन्हें धन्यवाद दिया तथा परिवार की ओर से भी कृतज्ञता व्यक्त की। तब उन्होंने बतलाया कि हम एक 'मिशन' ले कर आपके पास आये हैं। मैंने उनके 'मिशन' के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने की जिज्ञासा प्रकट की तो उन्होंने बतलाया कि हम श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में कुछ वार्ता आपसे करना चाहते हैं।

मैंने कहा कि श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के विषय में कुछ कहने के लिए मुझमें न तो योग्यता ही है और न ही आधिकारिक क्षमता है, इसके लिए तो आश्रम में एक-से-एक क्षमतावान्, गुणवान् तथा ऐसे आख्यानों के लिए निपुण अनेकों व्यक्ति हैं।

इस पर उन्होंने कुछ ऐसा आज्ञा-मिश्रित आग्रह किया कि मैं उनके अनुरोध के समक्ष नत-मस्तक हो गया।

मैंने मन-ही-मन श्री स्वामी जी महाराज का स्मरण किया और उनसे प्रार्थना की कि ''हे भगवान्, यदि मैं कुछ कह सकने में समर्थ हुआ तो यह आपकी कृपा के बिना सम्भव नहीं हो सकेगा। अतएव, भगवान् कृपा करो!''

इसी स्मरण के साथ मैंने स्वामी जी महाराज के सम्बन्ध में कुछ बातें उन्हें बतलायीं और उन्होंने साथ में लाये हुए टेपरिकार्डर पर यह वार्ता टेप की; परन्तु ऐसा लगा जैसे कि न तो उनका मन भरा है, और न ही मैं कुछ सुचारु रूप से अपनी बात कह पाया हूँ। इच्छा होती थी कि मैं महाराजश्री के सम्बन्ध में वार्ता करता ही रहूँ। अतएव यह निर्णय हुआ कि कुछ लिखा जाये; परन्तु मैं तो इस लेखन-कला से अनभिज्ञ हूँ, यह मेरे लिए कैसे सम्भव होगा, तो भी श्रीमती डा. आभा सूचक जी ने मेरा साहस बढ़ाया और कहा कि जैसे भी हो, जितना भी हो, चाहे शब्दावली कैसी भी हो, बिना इसकी चिन्ता किये जो हो लिख डालो।

महाराजश्री स्वामी शिवानन्द जी के प्रमुख शिष्य श्री स्वामी चिदानन्द जी जैसे सन्त परम पिता परमात्मा की कृपा से ही पृथ्वी पर अवतरित होते हैं। भगवान् इन्हें अपने सभी गुणों से सम्पन्न कर पृथ्वीवासियों पर स्नेह, दया, करुणा की वर्षा करने और भगवच्चरणानुरागी बनाने के लिए ही भेजता है। अनेकों धर्मावलम्बियों को इन्होंने अपने धर्मों का पालन करते हुए, सन्मार्ग पर चलने की राह दिखायी है, ऐसे महापुरुष के समीप आने का, उनकी कृपा पाने का अवसर कैसे मिला, कैसे परमात्मा ने हम पर अनुग्रह किया अपने देवदूत को यहाँ भेज कर, इस पर प्रकाश डालने की चेष्टा करने का यह एक छोटा-सा प्रयास है। आशा है त्रुटियों के लिए सभी महानुभाव सन्त, महात्मा, ज्ञानी जन, पाठक-वृन्द क्षमा करेंगे।

ओमप्रकाश ठाकुर

प्रथम भाग

दिव्य विभूति श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज और शिवानन्द आश्रम

भगवान् की माया बड़ी विचित्र और अपरम्पार है, इसका पार तो बड़े-बड़े ऋषि जन और ब्रह्मज्ञानी भी नहीं पा सके, तो साधारण मनुष्य की तो बिसात ही क्या? प्रभो, किससे कब क्या ले लेंगे और क्या दे देंगे, अपनी कृपा से कब निहाल कर देंगे, कोई कुछ नहीं कह सकता। सब-कुछ अवर्णनीय है। ऐसी ही एक घटना के कारण हमारे परिवारी जन हरिद्वार आ कर एक अल्पकालीन समय के लिए निवास करने की इच्छा से यहाँ रह रहे थे; परन्तु यहाँ रहते-रहते मेरी दादी माँ का मन कुछ ऐसा इस तीर्थ में रमा कि उन्होंने यहाँ से जाने से ही मना कर दिया और सम्पूर्ण जीवन यहीं व्यतीत करने की इच्छा प्रकट की। तब से हमारा परिवार यहाँ निवास कर रहा है। लगभग ७८ वर्ष हो गये, मेरे जन्म से भी पूर्व से।

आजीविकोपार्जन हेतु हमारे यहाँ संगमरमर पाषाण पर शिलालेख का कार्य होता है। इस कार्य में विशेष रूप से आश्रमों, धर्मशालाओं, मन्दिरों आदि में दानियों के नाम की शिलाएँ खुदाई कर लगायी जाती हैं।

परिणामतः अनेकों आश्रमों, मठों तथा धार्मिक संस्थाओं से हमारे परिवार का परिचय इसी कार्य-सम्पादन हेतु होता रहता है। अनेकों सन्तों, महन्तों तथा प्रसिद्ध धर्मावलम्बियों से पूज्य पिताजी का परिचय रहा है।

जहाँ तक मुझे स्मरण है शिवानन्दाश्रम के शिलालेखों के कार्य हेतु

सबसे पहले श्री लक्ष्मणसिंह (पाल जी के बड़े भाई) पिताजी के पास आये और आश्रम में निर्मित योग साधना कुटीर के दानियों के शिलापट्ट बनाने का आर्डर दिया। यहीं से हमारा परिचय शिवानन्द आश्रम से शुरू हुआ। पिताजी का कार्य देख कर श्री स्वामी जी महाराज बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने पिताजी को ऋषिकेश आमन्त्रित किया। तब तक भजन हाल का भवन बन कर तैयार हो चुका था। इस पर एक बड़ा शिलालेख लगा है जिस पर सोसायटी की गतिविधियों का उल्लेख है। इस शिलालेख का आर्डर पिताजी को स्वामी जी ने दिया तथा साथ ही निर्मित होते 'विश्वनाथ मन्दिर' के फर्श की चर्चा भी की और बतलाया कि यह काम भी आपको करना है।

शिलालेख का मैटर ले कर पिताजी वापस जब हरिद्वार आये तो महाराजश्री के सम्बन्ध में अनेकों बातें बतलायीं, कि उनका बातचीत करने का ढंग कितना निराला और आत्मीय है तथा निश्छल तथा निष्कपट है। सबसे बड़ा उनके मन से निकला जो उद्‌गार था वह कुछ इस प्रकार से है, ''मैं आज एक बहुत ही अलौकिक एवं दिव्य मूर्ति के दर्शन करके आया हूँ। ऐसी विभूति मैंने आज तक नहीं देखी, जब कि अक्सर ही मैं हरिद्वार तथा ऋषिकेश में अनेकों मठों, मन्दिरों तथा आश्रमों के सन्तों, महन्तों से मिलता रहता हूँ। निःसन्देह सभी पूजनीय तथा आदरणीय हैं; परन्तु स्वामी जी की बात कुछ और ही है, अवर्णनीय! शब्दों में इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। इसे केवल अपने ज्ञान द्वारा अनुभव किया जा सकता है।'' जैसे-जैसे पिताजी महाराज के बारे में बतलाते थे, वैसे-वैसे मेरी महाराजश्री के दर्शनों की इच्छा तीव्र होती जाती थी, आखिर मैंने अपने मन की बात पिताजी से कह दी कि मुझे भी आप उनके दर्शनों के लिए ले चलना। पिताजी ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान की और बतलाया कि शीघ्र ही हम वहाँ निकट-भविष्य में जायेंगे, तब तुम भी साथ चलना।

पिताजी ने भजन हाल की उपरोक्त वर्णित शिला तथा फर्श का पत्थर तैयार करवा कर एक दिवस इस सब सामान को आश्रम पहुँचाने के लिए एक बैलगाड़ी की व्यवस्था की। तब हरिद्वार–ऋषिकेश के बीच ट्रांसपोर्ट का साधन ताँगा या बैलगाड़ी ही हुआ करते थे।

अपना यह आश्रम पूर्व में ही टिहरी गढ़वाल रियासत का भाग था, यहाँ कैलास आश्रम के समीप से रियासत की सीमा आरम्भ होती थी। टिहरी के महाराजा श्री नरेन्द्रशाह जो उस समय के शासक थे, उन्हें भी यह ज्ञात नहीं था कि उनकी रियासत की सीमा में स्थित मुनिकीरेती में ऐसे एक महान् सन्त निवास कर रहे हैं। टिहरी महाराजा को लन्दन में उनके किसी परिचित ने 'डिवाइन लाइफ' मैगजीन दिखा कर पूछा था कि क्या आप इन सन्त को जानते हैं और उनके मना करने पर उन्होंने उनको कहा कि इतने बड़े महात्मा आपकी रियासत में निवास कर रहे हैं और आप उनसे अनभिज्ञ हैं, आश्चर्य है? तब लन्दन से वापस आते समय महाराजा मुनिकीरेती में रुके और महाराजश्री के दर्शनार्थ उनकी कुटिया पर पहुँचे। श्री स्वामी जी महाराज ने उनका यथोचित स्वागत–सत्कार किया। औपचारिक आदान–प्रदान के पश्चात् विदा लेने से पूर्व महाराजा ने श्री स्वामी जी महाराज से कुछ सेवा बतलाने के लिए कहा। महाराजश्री तो कभी किसी से कोई सवाल करते ही नहीं थे, इसलिए महाराजा से भी कुछ नहीं कहा; परन्तु महाराजा ने स्वयं ही यह भू–भाग जो पहाड़ी पर स्थित है, जहाँ इस समय विश्वनाथ मन्दिर, भजन हाल, समाधि मन्दिर, प्रेस तथा योग साधना कुटीर आदि भवन स्थित हैं, आश्रम को प्रदान किया।

यह पहाड़ी पर स्थित भू–भाग मिलने पर श्री स्वामी जी महाराज ने ऊपर जाने के लिए मार्ग बनवाया। यह मार्ग कुछ इस प्रकार का था जैसा

अँगरेजी में Z का आकार होता है। वर्तमान सीढ़ियाँ तो बहुत बाद में बनीं। इससे पहले यहाँ पर लकड़ी की सीढ़ी थी। यह सरल मार्ग तथा मोटर रोड तो बहुत बाद की बात है। ऊपर जब Z की आकृति वाला मार्ग था, तब ही ऊपर भवन-निर्माण का कार्य आरम्भ हो चुका था। भजन हाल, योग साधना कुटीर, जहाँ प्रेस है, वह बिल्डिंग वानप्रस्थ हर्मिटेज के नाम से बन चुके थे और मन्दिर-निर्माण का कार्य चल रहा था।

इस मन्दिर-निर्माण के कार्य हेतु जब पिताजी फर्श का पत्थर तथा भजन हाल पर लगा हुआ गतिविधियों वाला शिलालेख ले कर बैलगाड़ी पर रख कर टिहरी-गढ़वाल की सीमा में प्रविष्ट हुए, तो रात्रि के दो बजे थे। कैलासगेट की पुलिस चौकी पर उनको पुलिस द्वारा रोक लिया गया तथा उनको अन्दर आने की इजाजत नहीं दी जायेगी, ऐसा आदेश सुनाया।

बहुत अनुनय के बाद बतलाया गया कि टिहरी रियासत में वायसराय आये हुए हैं, न जाने कब उनका स्टाफ इधर-उधर आये-जाये, इसलिए साधारण जन के लिए सड़क मार्ग बिलकुल बन्द है। यह स्थिति थी कि ऊपर आश्रम से आ कर सड़क पार कर नीचे आश्रम में जाना है तो पुलिस वाले से आज्ञा ले कर सड़क पार करनी होती थी।

परन्तु श्री स्वामी जी महाराज का नाम लेने पर तथा यह बतलाने पर कि यह सब सामान शिवानन्द आश्रम जाना है, यह सुन कर तथा टिहरी महाराजा का स्वामी जी के प्रति आदर-भाव जान कर बड़ी अनुनय-विनय के पश्चात् ऑफीसर ने इस शर्त पर आज्ञा प्रदान कि यह गाड़ी खाली हो कर सुबह ४ बजे तक टिहरी गढ़वाल रियासत की सीमा से बाहर चली जानी चाहिए। सब सामान के साथ रात्रि में पिताजी आश्रम पहुँचे, वहाँ सारी स्थिति तत्कालीन व्यवस्थापकों को बतलायी तो आश्रम के सभी संन्यासी

व ब्रह्मचारियों को रात्रि में उठाया गया और समस्त सामान तुरन्त गाड़ी से उतार कर खाली गाड़ी को पाँच बजे तक रियासत की सीमा से बाहर पहुँचाया गया।

कुछ दिवस के उपरान्त पिताजी मुझे, मेरे चाचा श्री खेमसिंह जी तथा मेरी छोटी बहन को ले कर एक ताँगे में बिठला कर आश्रम पहुँचे, यहाँ आ कर महाराजश्री के दर्शन हुए पिताजी ने सबका परिचय दिया। यह जान कर कि हमारी माता जी का निधन एक वर्ष पूर्व ही हुआ है, स्वामी जी महाराज बहुत द्रवित हो उठे। सभी सेवकों तथा योग साधना कुटीर में महाराज के विश्वस्त सेवाभावी कर्मचारी श्री सन्तराम जी को हम सबका ध्यान रखने का आदेश दिया। हमारे लिए भी योग साधना कुटीर में ही निवास की व्यवस्था की गयी। कुटीर के सामने के भू-भाग में पिताजी तथा चाचाजी नित्य ही अपने कार्य को पूर्ण करने की ओर प्रयास करने लगे। यहीं कार्य करते हुए, धवल वस्त्रधारी ब्रह्मचारी श्री श्रीधर राव जी से परिचय हुआ जो कालान्तर में श्री स्वामी चिदानन्द जी के नाम से विख्यात हुए।

विश्वनाथ मन्दिर की प्राणप्रतिष्ठा की तैयारियाँ चल रही थीं, भगवान् श्रीराम, सीता, लक्ष्मण एवं हनुमान जी की मूर्तियाँ और श्रीकृष्ण भगवान् की श्याम वर्ण की मूर्ति आश्रम में पहुँच चुकी थीं। प्रतिष्ठा से पूर्व इनको भजन हाल में रखने की व्यवस्था की गयी, परन्तु श्री स्वामी जी महाराज को यह अच्छा नहीं लगा कि ये मूर्तियाँ यहाँ ऐसे ही रखी रहें, अतएव निश्चय हुआ कि जब तक ये मूर्तियाँ यहाँ रखी हुई हैं तब तक अखण्ड महामन्त्र कीर्तन यहाँ चलता रहना चाहिए। महाराजश्री के निश्चयानुसार **'हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे; हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे'** का अखण्ड महामन्त्र कीर्तन दिन-रात २४ घण्टे भजन हाल में इस प्रकार ३ दिसम्बर

१९४३ को आरम्भ हुआ, और जब मूर्तियाँ ले जा कर मन्दिर में प्रतिष्ठापित कर दी गयीं तो भी महाराज ने कीर्तन को बन्द नहीं कराया और कहा कि 'ओजी, जब यह शुरू हो गया है तो इसको बन्द क्यों करना!' आज भी यह अनवरत जारी है।

मन्दिर की प्राणप्रतिष्ठा की तैयारियाँ पूर्णता की ओर थीं, फर्श लग चुका था, मन्दिर के मध्य में विश्वनाथ भगवान् को प्रतिष्ठित करना था। भगवान् को प्रतिष्ठित करने का आधार जिसे जलहरी कहते हैं तथा परिवारह्नश्री गणेश और माता पार्वती नन्दीगण, इन सबको लाने के लिए महाराज ने मेरे चाचाजी श्री ठाकुर खेमसिंह जी को जयपुर भेजा और वह ये मूर्तियाँ वहाँ से ले कर आये थे। बड़ी धूमधाम से मन्दिर की प्राणप्रतिष्ठा हुई, टिहरी महाराजा श्री नरेन्द्र शाह भी इसमें सम्मिलित होने पधारे थे। अनेकों गणमान्य व्यक्ति और विद्वज्जन महाराज के आमन्त्रण पर पधारे थे। बहुत ही विशाल भण्डारा हुआ। ऊपर विश्वनाथ मन्दिर से ले कर नीचे गंगाघाट तक जहाँ भी कहीं पंगत लगने की व्यवस्था हो सकती थी, सब जगह पंगत लगायी गयी थी, निमन्त्रित और अनिमन्त्रित सभी जन भोजन कर रहे थे।

महाराजश्री स्वामी शिवानन्द जी ने अपने जीवन-काल में बहुत काम किये; परन्तु ऐसा नहीं कि उनकी कोई प्लानिंग होती थी। बस, अचानक भगवद्-प्रेरणा हुई और उन्होंने कार्य आरम्भ करवाया। इस कार्य को कैसे पूर्ण होना है, धन कहाँ से आयेगा, व्यक्ति कहाँ से आयेंगेह्नह्नकिसी बात की कोई चिन्ता नहीं। ''ओजी, भगवान् का काम है, सब भगवान् पूर्ण करेंगे।''

मुनिकीरेती में आस-पास भी कहीं कोई शिक्षा की व्यवस्था न थी। यह देख कर महाराज ने शि. प्रा. स्कूल (शिवानन्द प्राइमरी स्कूल) की स्थापना की और वर्तमान में जो प्रेस की बिल्डिंग है, इसमें सुचारु रूप से श्री

सच्चिदानन्द मैठानी के प्रयास एवं लगन से मूर्त रूप पाया। इन्हें 'मास्टर जी' कह कर सम्बोधित करते थे। श्री स्वामी जी मास्टर जी ही कहते थे। श्री स्वामी जी महाराज के आशीर्वाद और मास्टर जी के प्रयास से लक्ष्मणझूला एवं समीपवर्ती तपोवन तक से लड़के-लड़कियाँ शिक्षा ग्रहण करने आते थे, मुनिकीरेती के तो समस्त परिवार ही लाभान्वित हुए। श्री स्वामी जी महाराज ने सभी कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए पुस्तकों की व्यवस्था करने का भी आदेश पारित किया। पढ़ने वाले विद्यार्थियों को केवल कापी की व्यवस्था करनी होती थी, पुस्तकें आश्रम से मिलती थीं। इस प्रकार चलता था शिवानन्द प्राइमरी स्कूल, जहाँ गीता कण्ठस्थ करना भी आवश्यक था।

डिवाइन लाइफ मैगजीन डिस्पैच करने में भी सभी आश्रमवासियों का सहयोग लिया जाता था। अँगरेजी पत्रिका की लोकप्रियता को देखते हुए हिन्दी में भी 'योग-वेदान्त' के नाम से पत्रिका आरम्भ की गयी। इस अँगरेजीभाषी आश्रम में भगवान् ने हिन्दी का भी ज्ञान रखने वाले एक व्यक्ति को भेज दिया जो अल्मोड़ा, कुमाऊँ की तरफ के रहने वाले थे। नाम था धर्मेन्द्र सिंह, जो बाद में स्वामी सत्यानन्द हुए। योग-वेदान्त को प्रारम्भ कराने में इनका बड़ा योगदान रहा।

आजकल जहाँ पोस्ट आफिस है यह श्री स्वामी जी महाराज का मुख्य कार्यालय होता था। नित्य ही महाराज निर्धारित समय पर यहाँ पधारते थे। उन दिनों श्री स्वामी विशुद्धानन्द जी, श्री स्वामी पूर्णबोध जी और नारायण स्वामी जी आदि कार्यालय तथा आश्रम की व्यवस्था के संचालक थे। आफिस से आगे कैश आफिस था। कैश आफिस और मुख्य कार्यालय के सामने एक छोटी-सी बगीची थी जिसमें पुष्प खिले रहते थे। कैश आफिस से आगे खुला भाग था, साथ ही कुछ कमरे थे जिनमें एक कमरे में स्टोर,

एक में लंगर इन्चार्ज श्री स्वामी विश्वेश्वरानन्द जी निवास करते थे, एक में किचन या लंगर था, एक कमरे में केवल एक आलमारी रख कर डिस्पेंसरी चलती थी और आखिरी कमरा पोस्ट आफिस होता था, जिसमें पोस्ट आफिस इन्चार्ज स्वामी जी का निवास तथा कार्यालय होता था। उस समय पोस्ट आफिस 'आनन्द कुटीर' कहलाता था, यही बाद में शिवानन्दनगर पोस्ट आफिस में परिवर्तित हुआ। इन कमरों के आगे के भाग को ही लंगर में परिवर्तित किया गया।

महाराजश्री नित्य नियम से आफिस में आ कर बैठते थे, वहीं आगन्तुकों से भेंट करते थे।

सायंकाल भोजनोपरान्त नित्य रात्रि-कालीन सत्संग होता था, समय और मौसम के अनुसार यह सत्संग महाराज की कुटिया पर खुले स्थान में, भजन हाल में अथवा समीपवर्ती राम आश्रम के एक भाग जिसे धर्मशाला कहते थे, में आयोजित होता था। अनेकों वर्षों तक दुर्गापूजा का आयोजन राम आश्रम की इस धर्मशाला में ही होता रहा है।

वर्ष में दो बार साधना सप्ताह का आयोजन होता थाह्लह्लएक क्रिसमस के अवकाश पर दिसम्बर में, दूसरा ईस्टर साधना सप्ताह कहलाता था। तीसरा मुख्य आयोजन श्री स्वामी जी के जन्म-दिवस पर होता था। यह आश्रम के तीन पर्व थे, वैसे तो आश्रम में नित्य ही कुछ न कुछ व्रत, त्यौहार, पूजा आदि सम्पन्न होते रहते थे। साधना सप्ताह के कार्यक्रमों में 'बोट कीर्तन' एक विशेष कार्यक्रम होता था। उन दिनों गंगा जी में हाथ से चलाने वाली नौका काली कमली क्षेत्र के द्वारा गंगा जी में निःशुल्क आर-पार करवाती थी। इन्हीं नावों के द्वारा स्वामी जी और उनके भक्त जन उनमें बैठ कर कीर्तन करते हुए पार जाते थे और वहाँ जा कर स्वामी जी के

प्रिय श्री नारायण स्वामी जी के यहाँ पहुँच कर सत्संग होता था, और इसी प्रकार कीर्तन करते हुए, नाव में बैठ कर वापस आश्रम आते थे। साधना सप्ताह के आखिरी दिन 'दिव्य जीवन' नाम का नाटक होता था जिसमें आश्रमवासी तथा आगन्तुक मेहमान भी भाग लेते थे। इसमें एक श्री स्वामी जी का पार्ट था जिसको अभिनीत करने का सौभाग्य अधिकांशतः पिताजी को ही प्राप्त होता था। श्री स्वामी जी महाराज उनके इस अभिनय को बहुत ही मनभावन मानते थे। इसी के फलस्वरूप जब एक बार आश्रम में श्री स्वामी जी महाराज के जीवन पर आधारित 'शिवानन्द विजय' नाटक का मंचन होने लगा तो इस नाटक के लेखक एवं दिग्दर्शक श्री सुन्दरश्याम 'मुकुट' जो भरत मन्दिर हाईस्कूल के एक अध्यापक थे, को स्वामी जी महाराज ने स्वयं ही पहले कह दिया कि 'ओजी, स्वामी शिवानन्द के अभिनय के लिए मैं ठाकुर प्रभुसिंह का नाम प्रस्तुत करता हूँ, बाकी अन्य पात्रों का चयन करने का आपको अधिकार है।' इस नाटक में मुझे, मेरे पिताजी और मेरी बहनद्वद्वतीनों को ही अभिनय करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आश्रम में अभिनीत अनेकों नाटकों में भाग लेने का सौभाग्य मिला। एक अवसर पर तो श्री स्वामी जी महाराज ने स्वयं अपने करकमलों से 'रजतपदक' का मेडल सैकिंड प्राईज के रूप में प्रदान किया और प्रथम रहे हमारे आश्रम के श्री सुरेशचन्द्र 'सुमन'। कई बार श्री स्वामी जी महाराज भी खड़े हो कर स्टेज पर नाचने लगते थे, नाचते हुए उनका प्रिय भजन होता था, 'अगड़ बम अगड़ बम बाजे डमरू, नाचे सदा शिव जगत् गुरु'।

श्री स्वामी जी महाराज बच्चों को खेलने के लिए प्रोत्साहित करते थे। हमारे अध्यापक श्री सच्चिदानन्द जी को सदैव कहते थे, ''ओजी, बच्चा लोग को मारना नहीं।'' फिर भी वह मारा करते थे, उनका कथन था कि 'बिन भय होत न प्रीत', इसलिए थोड़ी पिटाई आवश्यक है। यही श्री

सच्चिदानन्द जी (मास्टर जी) हमें पढ़ाते थे और स्वयं पढ़ने के लिए आयुर्वेद विद्यालय धन्वन्तरि भवन, ऋषिकेश जाया करते थे। इस विद्यालय में अपना अध्ययन पूर्ण कर उन्होंने आयुर्वेदाचार्य की डिग्री ग्रहण की। आयुर्वेदाचार्य होने के बाद वह एक दिवस श्री स्वामी जी महाराज से आज्ञा लेने गये, मेरे पिताजी भी साथ थे, तब उन्होंने श्री स्वामी जी महाराज को बतलाया कि मेरा अध्ययन पूर्ण हो गया है, अब मैं आपसे आज्ञा और आशीर्वाद ले कर कहीं अन्यत्र जीविकोपार्जन हेतु जाना चाहता हूँ। कृपा कर आशीर्वाद सहित आज्ञा प्रदान करें। परन्तु महाराज ने प्रश्न पूछा कि आप च्यवनप्राश बना सकते हैं, क्या आपको शिलाजीत आदि औषध बनाने का ज्ञान है? तब मास्टर जी ने बतलाया कि 'महाराज, मैं ये सब-कुछ बना सकता हूँ।' तब महाराजश्री ने कहा कि 'ओजी, कहीं क्यों जाना है, इधर ही शुरू करो। इधर आपको सब साधन प्रदान किये जायेंगे।' पिताजी से भी बीच-बीच में स्वामी जी वार्ता करते रहते थे। शिलाजीत की चर्चा होने पर पिताजी ने बतलाया कि स्वामी जी इसके लिए शिलाजीत का पत्थर लाना पड़ेगा, उसको शोधन होगा तब शिलाजीत का निर्माण होगा, सूर्यतापी और अग्नितापी अलग-अलग बनायी जायेगी। सारी प्रक्रिया जानने और समझने के उपरान्त पिताजी और मास्टर जी को आवश्यक सामग्री एकत्र करने का महाराजश्री ने आदेश प्रदान किया। बातों ही बातों में आश्रम में 'शिवानन्द आयुर्वेदिक फार्मेसी' का शुभारम्भ हो गया।

पिताजी के साथ महाराजश्री का सम्बन्ध दिन-प्रति-दिन प्रगाढ़ होता रहा। श्री स्वामी जी महाराज की एक विशेष अनुकम्पा रहती थी कि यदि पिताजी आश्रम में हैं तो रात्रिकालीन सत्संग पूर्ण करने से पूर्व एक भजन अवश्य ही पिताजी से सुनते थे।

ऋषिकेश स्थित विश्वनाथ बाग एवं गौशाला श्री विशुद्धानन्द जी के समय में अस्तित्व में आयी। पिताजी और विशुद्धानन्द जी ने स्वयं अपने हाथों से फावड़ा चला कर यहाँ की भूमि को समतल तथा उपयोगी बनाया है।

ग्रामोफोन रेकार्ड्स से महाराज के भजन और कीर्तन संग्रहित करवाने का कार्यक्रम निर्धारित हुआ। इसके लिए महाराजश्री ने बम्बई जाना था। चलते समय श्री स्वामी जी ने पूछा कि ओजी प्रभुसिंह जी, आपके लिए बम्बई से क्या लाना है? उत्तर में पिताजी ने कुछ विशेष प्रकार का पेपर और कला (Drawing) से सम्बन्धित ब्लैक पैंसिल और अन्य सामान मँगवाया। स्वामी जी जब बम्बई से वापस आये तो वह सब ले कर आये। उस सामान से पिताजी ने आश्रम में रह कर 'योग साधना कुटीर' के कमरे में निवास करते हुए महाराज का एक बहुत सुन्दर एवं विशाल चित्र तैयार किया, जिसमें गंगा-तट पर स्वामी जी ध्यानस्थ बैठ थे और पार्श्व (बैक ग्राउण्ड) में पार स्वर्गाश्रम का शिवालय दिखलायी पड़ता था। यह चित्र बहुत समय तक भजन हाल की शोभा बढ़ाता रहा है। बम्बई प्रस्थान के समय जब स्वामी जी महाराज ट्रेन से हरिद्वार पधारे तो अन्य कई आश्रमवासी महाराज को हरिद्वार स्टेशन पर विदा देने के लिए आये थे, पिताजी भी साथ थे। स्वामी जी की ट्रेन रात को जानी थी, पाँच-छह घण्टे का समय था। स्वामी जी ने पिताजी से पूछा, ''ओजी, इतना समय है, बोलो कहाँ चलना है?'' पिताजी ने कहा, ''स्वामी जी, महन्त शान्तानन्द जी अनेकों बार कह चुके हैं कि स्वामी जी को हमारे यहाँ लाओ और आपसे भी कई बार निवेदन किया है, वहीं चलते हैं।'' तुरन्त महाराज का उत्तर आया, ''ओजी, आपके घर क्यों नहीं?'' पिताजी अवाक् रह गयेह्वह्वइतने बड़े सन्त, मेरा छोटा-सा घर, वह भी व्यवस्थित नहीं, क्या कहूँ? 'ना' कह नहीं सकता, 'हाँ' कहने

का साहस नहीं जुटा पा रहा। फिर स्वामी जी ने ही कहा, ''ओजी, हम आपके घर चलेंगे।'' ''ठीक है स्वामी जी!'' पिताजी ने हरकीपैड़ी के समीप ही एक छोटा-सा मकान किराये पर ले रखा था, वहीं स्वामी जी को ले गये और विश्राम कराया। घर छोटा जरूर था, परन्तु उसकी लोकेशन को देख कर स्वामी जी का मन प्रसन्न हो गया और कहा, ''ओजी, आप तो बहुत सुन्दर स्थान में रहते हैं, वास्तव में इस मकान से गंगा जी का दृश्य बहुत सुन्दर है।'' रात्रि में ट्रेन से बम्बई के लिए प्रस्थान किया।

मनुष्य के जब पुण्य-कर्मों का उदय होता है तो वह अच्छे, सज्जन तथा मानवीय गुणों से सम्पन्न साधु जनों के सम्पर्क में आता है, ऐसे ही एक सज्जन सेवाभावी व्यक्ति से श्री स्वामी जी महाराज की कृपा से सम्पर्क बना, परिचय हुआ। एक बार श्री स्वामी जी महाराज का मन आश्रम से विरक्त हो उठा, उनको कुछ ऐसा लगा कि गृह त्याग कर आये और यहाँ दूसरा घर बना लिया, इसका भी त्याग कर देना चाहिए और महाराज आश्रम छोड़ कर चल दिये, किसी को पता नहीं, कहाँ गये और किधर गये। जब उस समय के आश्रमवासी और अधिकृत जनों को यह पता चला कि स्वामी जी न तो कुटिया में हैं, और न ही आश्रम में किसी स्थान पर हैं, तो उनकी खोज शुरू हुई, सभी तरफ लोग दौड़-धूप करने लगे। परन्तु स्वामी जी जैसा व्यक्तित्व का धनी कहाँ छुप सकता था! खोजने पर पता चला कि इस प्रकार के व्यक्ति को इस ओर जाते देखा है। हरिद्वार के समीप स्थित ग्राम जगजीतपुर में एक गरीब किसान के घर में स्वामी जी को पाया गया। यह किसान 'भक्त जी' के नाम से प्रसिद्ध थे। इनसे हमारा सम्पर्क स्वामी जी की कृपा से हुआ। बहुत ही सज्जन, मिलनसार, मृदुभाषी व्यक्ति थे। वर्ष में एक बार अवश्य ही आश्रम आते थे, साथ ही अपने कृषिक्षेत्र से उत्पन्न कोई न कोई वस्तु भी लाते थे। मुझे भी श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज के साथ

दो-तीन बार इनके घर जाने का तथा इनका स्नेह पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। श्री स्वामी जी महाराज इनको देख कर बहुत प्रसन्न हुआ करते थे। इन्होंने स्वामी जी की सेवा इतने मनोयोग से की जिसका महाराज ने सदैव उपकार माना, क्योंकि इनको पता ही नहीं था कि इतने बड़े महान् विद्वान् तथा इतने बड़े आश्रम के अधिपति सन्त, गरीब के घर में निवास कर रहे हैं।

सब लोगों की अनुनय-विनय को स्वीकार कर स्वामी जी आश्रम वापस आये।

साधु, सन्तों, फकीरों की मौज हुआ करती है। इसको कुछ लोग 'लहर' भी कहते हैं। ऐसी ही एक मौज एक दिन महाराज स्वामी शिवानन्द जी के मन में भी आयी। महाराज ने मुनिकीरेती के आश्रम के समीप निवास करने वाले सभी परिवारों तथा अनेकों आश्रमवासियों के साथ श्री रघुनाथ जी महाराज के मन्दिर तथा गंगा-दर्शन की इच्छा प्रकट की। दो बसों का प्रबन्ध किया गया, उनमें हम सब लोग बैठ कर उत्तराखण्ड में स्थित देवप्रयाग नामक स्थान पर श्री स्वामी परमानन्द जी के नेतृत्व में पहुँचे। श्री स्वामी परमानन्द जी, महाराज के प्रमुख शिष्यों में से एक विशिष्ट व्यक्तित्व के व्यक्ति थे। देवप्रयाग तक कीर्तन करते हुए गये और आये। 'बसों में भी बातचीत नहीं करनी है, केवल कीर्तन करना है', ऐसा महाराज का आदेश था। देवप्रयाग में भगवान् राम का विशाल रघुनाथ मन्दिर है यहाँ दर्शन किये, मन्दिर में भजन-कीर्तन हुए। भागीरथी और अलकनन्दा के संगम का दर्शन किया। इन दोनों पवित्र नदियों के संगम के उपरान्त ही 'गंगा' नाम शुरू होता है, इस प्रकार से यह स्थान गंगा का आरम्भ-स्थल है। दर्शनोपरान्त सा. नि. वि. के बँगले में सभी के साथ बैठ कर महाराज ने भोजन किया और

सायंकाल आश्रम पहुँचे। ऐसे कार्यक्रम महाराज ऋषिकेश स्थित विश्वनाथ बाग में अनेकों बार आयोजित करते थे।

'भूल जाओ और क्षमा करो' (Forget & Forgive) के सिद्धान्त का महाराज अक्षरशः पालन करते थे। एक बार आश्रम के समीप निवास करने वाला एक बालक गुलेल से बन्दर को मार रहा था। स्वामी जी महाराज अपने आफिस जा रहे थे। उसके द्वारा गुलेल से मारा हुआ पत्थर बन्दर को नहीं लगा और महाराज के पाँव में आ कर लगा, रक्त बहने लगा। बालक भयभीत हो गया। भयभीत बालक को महाराज ने अपने समीप बुलाया और कहा, ''ओजी, ऐसा नहीं करना, बन्दर में भी आपके जैसा प्राण है। यदि उसको लगती तो उसे कितनी पीड़ा होती?'' बालक ने महाराज के चरण-स्पर्श कर क्षमा माँगी, अनेकों ऐसे अवसर आये, जब देखा कि महाराज को क्रोध आयेगा, परन्तु नहीं आया; महाराज को यह सुन कर अथवा जान कर दुःख होगा, परन्तु नहीं हुआ।

Bear Insult bear injury, Highest Sadhana (अपमान सहन करें, चोट सहन करें, यह सर्वोच्च साधना है), यह केवल कथन ही नहीं था, बल्कि इसको महाराज ने अपने जीवन में आत्मसात् कर लिया था। १९५३ में पार्लियामेन्ट आफ रिलीजन्स का आयोजन आश्रम में हुआ था। इस आयोजन के प्रमुख आयोजक श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज थे। मुझे भी अपने बड़े भाई समान साथी श्री रामरतन जी के साथ इस आयोजन में सेवा करने का अवसर प्राप्त हुआ था। ऋषिकेश स्टेशन जा कर आगन्तुक मेहमानों को सुविधापूर्वक आश्रम पहुँचाना और उनके लिए निर्धारित आवास की व्यवस्था देखना आदि। यह कार्यक्रम तीन दिन तक चला। प्रातः-सायं दो सत्र होते थे। तीसरा दिन था। मंच पर सभी धर्मों के विद्वान्

प्रतिनिधि विराजमान थे। सभी को क्रमानुसार भाषण देने के लिए आमन्त्रित किया जाता था। ऐसे ही एक आमन्त्रण पर एक सन्त भाषण देने के लिए उठे, महाराज ने माल्यार्पण कर उनका स्वागत-सत्कार किया। उन्होंने अपने भाषण में स्वामी जी की आलोचना ही नहीं की, उनके रहन-सहन, पहनावे, बोलचाल, अँगरेजी में बातचीत की भर्त्सना की। यह बीच-बीच में अपने को नेपाल-नरेश का राजगुरु बतलाते जाते थे। क्या सत्य था, भगवान् जाने। उनके कहने का तात्पर्य था कि मैं कोई मामूली व्यक्ति नहीं हूँ नेपाल-नरेश का राजगुरु हूँ। उनकी आलोचना पर स्वामी जी क्रोधित होने की बजाय मुस्कराते रहे और उनकी भाषण-कला पर ताली बजाते रहे। भाषण की समाप्ति पर पुनः माल्यार्पण कर धन्यवाद दिया, और कहा कि आपने मेरे दोषों का वर्णन कर मुझ पर उपकार किया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ, जब कि वहाँ बैठा हुआ समस्त समाज तथा महाराज के शिष्य गण इस व्यक्ति की इस करनी पर क्षुब्ध थे तथा इनके इस कृत्य को निन्दनीय बतला रहे थे।

आश्रम में निवास करते हुए अनेकों अवसरों पर महाराज का सान्निध्य और उनकी कृपा का प्रसाद प्राप्त होता रहा है। एक बार साधना सप्ताह में बालकों की योगासन क्लास का प्रदर्शन था। उसमें मेरा प्रदर्शन महाराज को अच्छा लगा, तो कुटिया से आते समय मेरे लिए पुरस्कार स्वरूप दो रेशमी अंगवस्त्रह्नएक नीले रंग का और दूसरा लाल रंग का तथा बिस्कुट और चाकलेट आदि ला कर प्रदान किये, इस प्रकार उत्साहवर्धन किया।

आश्रम में उन दिनों विशेष रूप से वर्षाऋतु में मलेरिया बहुत हुआ करता था। अस्पताल में आश्रम निवासियों के लिए तथा मुनिकीरेती वासियों के लिए कुनैन मिक्श्चर सदैव तैयार रहता था। ऐसे ही एक समय में एक ही

दिन में सुबह मेरी बहन को बुखार हुआ, स्कूल से वापस लौटने पर मुझे बुखार हुआ और सायंकाल विश्वनाथ बाग में कुछ कार्य कर लौटे पिताजी भी बुखार से पीड़ित हुए। कई दिन तक हम लोग ज्वर से पीड़ित रहे। स्वामी जी महाराज ने उपचार के साथ-साथ कृपापूर्ण अपनी वाणी का प्रसाद भी नित्य ही प्रदान किया। भजन हाल आते-जाते कुटिया के आगे आ कर 'हरि ॐ' करते और 'स्वास्थ्य कैसा है', इसकी भी जानकारी प्राप्त करते।

महाराजश्री ने अपने जीवन-काल में ही अपनी समाधि के लिए स्थान का चयन कर लिया था। वर्तमान में जहाँ समाधि है, उसके ऊपर जहाँ महाराज की मूर्ति विराजमान है, गुरु मन्दिर का यह भाग महाराज के जीवन-काल में ही पूर्ण हो गया था, मूर्ति श्री स्वामी परमानन्द जी महाराज के प्रयास से बन कर आयी थी। मन्दिर में संगमरमर का कार्य पिताजी के द्वारा श्री स्वामी विष्णुदेवानन्द जी की देखरेख में सम्पन्न हुआ।

भजन हाल के आगे स्थित शिवानन्द स्तम्भ (Pillar) का कार्य पिताजी ने महाराज के जीवन-काल में ही तैयार किया था, इसकी डिजाइनिंग (रूपरेखा) भी पिताजी ने स्वयं की थी। श्री स्वामी माधवानन्द जी महाराज का सहयोग और सुझाव भी पिताजी को समय-समय पर प्राप्त होता रहता था। यह कार्य सम्पूर्ण होने पर पिताजी के साथ व उनके सभी सहयोगियों के साथ महाराज ने चित्र भी खिंचवाया था जो कि आज भी आश्रम के दुर्लभ चित्रों में संग्रहित है।

आश्रम में भोजन के लिए पंगत लगने पर गीता के १५ वें अध्याय का पाठ होता है। छोटे-छोटे बालकों को जब स्वामी जी गीता का पाठ करते देखते थे, तो उनका मन बड़ा प्रसन्न होता था। यद्यपि स्वामी जी के लिए कुटिया में अलग से रसोई की व्यवस्था थी, परन्तु फिर भी कई बार स्वामी

जी हम सभी लोगों के साथ बैठ कर भोजन करते थे। एक बार हरिद्वार के महन्त शान्तानन्द नाथ जी के विशेष आग्रह पर स्वामी जी ने आश्रम के बालकों को उनके यहाँ एक उत्सव में भाग लेने के लिए श्री स्वामी शाश्वतानन्द जी और मास्टर जी सच्चिदानन्द जी के संयुक्त नेतृत्व में भेजा। इस उत्सव का आयोजन विशेष रूप से बालकों के लिए ही किया गया था। इस उत्सव में से आश्रम के सभी बालक, बालिकाएँ इनाम ले कर आये थे, महाराज यह जान कर बहुत प्रसन्न हुए। उसी समय रात्रि में सबके के लिए विशेष भोजन बनवाया और हम सबके साथ बैठ कर प्रसाद ग्रहण किया। किसी को भी अच्छे कार्य के लिए प्रोत्साहित करना महाराज की विशेषता थी। कभी-कभी कुछ गलत करने पर महाराज क्रोधित नहीं होते थे, परन्तु प्रेमपूर्वक डाँट लगाते थे और उनका डाँटना भी ऐसा होता था कि अन्दर तक तीर के माफिक जाता था। एक दिवस मैं और मेरे मित्र श्री सुरेशचन्द्र आश्रम की सीढ़ियों से नीचे तेजी से आ रहे थे। सीढ़ियाँ लकड़ी की बनी हुई थीं, इसलिए तेजी से उतरने के कारण बहुत आवाज हो रही थी। महाराज डायमंड जुबली हाल में अपने आफिस में बैठे हुए थे। डिस्टरबैंस होने के कारण महाराज ने हम दोनों को एक ब्रह्मचारी जी को भेज कर बुलाया और पास आने पर समझाते हुए कहा कि, ''ओजी, यह लकड़ी की सीढ़ी है और जोर से उतरने पर टूटती है और साथ ही आफिस में काम करने वालों को डिस्टरबैंस होता है। हाँ, धीरे से उतरना-चढ़ना। अच्छा जी, फिर कभी ऐसा नहीं करना। दस बार 'ॐ नमः शिवाय' बोलो, Be a good boy (अच्छे लड़के बनो)।''

इसी प्रकार महाराज का सान्निध्य और उनकी कृपा का प्रवाह गंगाजी के बहने के समान प्राप्त होता रहा है। कुछ समय तक महाराज की व्यक्तिगत सेवा में रहने वाले त्रिलोक सिंह जी की बहन से मेरा सम्बन्ध निश्चित किया

गया। विवाह में महाराज की कृपा से स्वयं श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की उपस्थिति एक वरदान के समान थी। श्री स्वामी जी कन्या-पक्ष और वर-पक्ष दोनों परिवारों से भलीभाँति परिचित थे। श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज स्वयं विवाह में उपस्थित रह कर आशीर्वाद देंगे, यह जान कर काली कमली, स्वर्गाश्रम के महन्त श्री सुन्दरप्रकाश जी और हरनामप्रकाश जी भी कन्या-पक्ष की ओर से बारात की अगवानी के लिए आये थे। यह सब अनमोल क्षण हमें श्री स्वामी जी की कृपा से ही प्राप्त हुए, पिताजी भाव-विभोर थे कि महाराज ने हम जैसे साधारण जनों पर कितना विशेष अनुग्रह किया है। विवाह सम्पन्न होने के उपरान्त एक दिन सबको ले कर पिताजी महाराज को प्रणाम कराने, धन्यवाद करने तथा आशीर्वाद प्राप्त करने हेतु महाराज की सेवा में उपस्थित हुए। इस अवसर पर महाराज ने श्री स्वामी शारदानन्द जी को बुलवा कर हमारे साथ फोटो खींचने के लिए भी कहा। फोटोग्राफ होने के उपरान्त महाराज ने प्रसाद दे कर विदा किया।

१४ जुलाई १९६३ को आल इण्डिया रेडियो ने प्रातःकालीन समाचारों में इस महान् आत्मा के ब्रह्मलीन होने की सूचना दी। इतनी आधिकारिक सूचना होने पर भी मन सहसा विश्वास नहीं कर रहा था कि ऐसा हो सकता है। पिताजी ने आश्रम फोन करने के लिए कहा, आश्रम का फोन इतना व्यस्त था कि उसका खाली मिलना मुश्किल था, अतः अपने एक परिचित प्रभावी व्यक्ति द्वारा ऋषिकेश टेलीफोन एक्सचेंज में फोन करवाया और वहाँ से भी जब इस समाचार की पुष्टि हुई तो हम लोगों ने आश्रम के लिए प्रस्थान किया। आश्रम पहुँच कर स्वामी जी की कुटिया में जा कर इस महान् आत्मा के दर्शन किये, पुष्पांजलि अर्पित की। मेरे पिताजी एक बहुत ही दृढ़ इच्छाशक्ति वाले व्यक्ति थे। मैंने उनको अनेकों ऐसे अवसरों पर जब व्यक्ति अपना धैर्य खो देता है, उस समय निश्चल और

अडिग देखा है; परन्तु उस दिन न जाने क्यों उनका भी धैर्य टूट गया, जैसे उनसे कोई अमूल्य और प्रिय वस्तु अथवा आत्मीय जन किसी ने छीन लिया होह्वह्वअसहाय-सी अवस्था में मैंने उनकी आँखों से अविरल अश्रुधारा बहते देखी थी। वह स्वयं भी काफी समय तक महाराज की पार्थिव छवि को निहारते रहे। वह ऐसे व्यक्ति थे जो मेरी माता जी के निधन के समय भी अविचल रहे, परन्तु आज महाराज को देख कर उनका अश्रुपात थमने का नाम नहीं ले रहा था।

महाराज की इच्छानुसार उनके स्वयं के द्वारा निर्धारित स्थान पर भू-समाधि दी गयी। तीन दिन के अन्दर श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने समाधि को एक स्वरूप प्रदान किया, पिताजी से महाराज के चरण-चिह्न बनाने के लिए कहा। पिताजी ने अपने हाथों से महाराज की चरण-छवि बनायी, जो कि आज भी समाधि पर स्थित है। मुझे भी स्वामी जी ने एक छोटी-सी जलहरि में नर्मदेश्वर ला कर देने के लिए कहा। आज भी मेरे द्वारा लाये गये शिवलिंग नर्मदेश्वर इस जलहरि में समाधि के ऊपरी भाग में प्रतिष्ठापित हैं। नित्य ही यहाँ पूजा, अभिषेक, अर्चना का कार्यक्रम चलता है। समाधि के भीतरी भाग का पाषाण का कार्य पिताजी के द्वारा ही सम्पन्न हुआ है।

इस प्रकार श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज और श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का वरदहस्त सदैव हमारे परिवार पर रहा है। उनकी कृपा के हम सदैव ऋणी हैं। यह हमारे परिवार की चौथी पीढ़ी है, जिसे शिवानन्द आश्रम में आशीर्वाद प्राप्त हुआ है। इन दोनों महान् सन्तों की कृपा-विशेष का कहाँ तक बखान करें, आश्रम के अनेकों कार्यों में हमारे परिवार को इन्होंने अग्रणी बना दिया है।

आश्रम में सर्वप्रथम संगमरमर का कार्य मेरे पिताजी द्वारा हुआ। आश्रम के विश्वनाथ मन्दिर में मूर्तियों की प्राणप्रतिष्ठा में योगदान रहा। आश्रम में विद्याध्ययन के लिए सर्वप्रथम बालक मैं ही था, मेरे से ही इस कार्य का श्रीगणेश हुआ था। आश्रम में शिवानन्द फार्मेसी के शुभारम्भ पर श्री सच्चिदानन्द मास्टर जी के साथ पिताजी का भी योगदान रहा। पिताजी ने ही सर्व प्रथम आश्रम में श्री सत्यनारायण व्रत-कथा का आयोजन किया, जिसमें स्वयं स्वामी जी महाराज ने बैठ कर श्री सच्चिदानन्द जी के मुखारविन्द से कथा सुनी, तब से निरन्तर ही कथा का आयोजन प्रत्येक माह आरम्भ हुआ। महाराज की समाधि पर स्थित शिवलिंग की स्थापना में मेरा भी योगदान ले कर महाराज ने विशेष कृपा कर अनुग्रहीत किया। इन सब कार्यों के लिए श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज और श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज तथा श्री स्वामी विमलानन्द जी महाराज जिनका कि प्रेम, कृपा और आशीर्वाद मुझे तथा मेरे परिवार को निरन्तर ६० वर्षों से प्राप्त हो रहा है, मेरे परिवार की चार पीढ़ियों को इनको नमन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अतएव इस महान् कृपा हेतु मैं तथा मेरा परिवार सदैव आपका आभारी और कृतज्ञ रहेगा। इनकी कृपा हम पर और सब पर सदैव बनी रहे, यही इनके चरण-कमलों में दास की विनम्र प्रार्थना है!

हरि ॐ तत्सत्!

भाग २

दिव्य विभूति श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

जैसा कि मैंने पहले बताया था कि योग साधना कुटीर में मेरे पिताजी जब कार्य में तल्लीन रहते थे, तो यदा-कदा उनके हाल-समाचार जानने तथा कार्य के सम्बन्ध में ज्ञात करने अथवा अपनी कोई जिज्ञासा, जो प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में होती, वार्ता करने हेतु एक धवल वस्त्रधारी सन्त आया करते थे, जिन्हें सब आश्रमवासी तथा आगन्तुक अतिथि गण 'राव जी' कह कर सम्बोधित करते थे। इनका पूरा नाम था श्री श्रीधर राव जी। ये ही आज के स्वामी चिदानन्द जी हैं।

आश्रम में आगमन एवं सेवाएँ

श्री स्वामी जी महाराज का पदार्पण इस आश्रम में सन् १९४३ में ही हुआ। आरम्भ से ही इनकी सेवाभावी वृत्ति को देख कर बड़े स्वामी जी ने इन्हें डिस्पेंसरी का कार्यभार सौंपा, तब की डिस्पेंसरी एक कमरे में केवल एक अलमारी तक ही सीमित थी। इसी में सारी औषधियाँ तथा मरहम, पट्टी आदि रखी रहती थी। वर्षाऋतु में आश्रम में निवास करने वाले अधिकांश जन मलेरिया से पीड़ित रहते थे। ग्रीष्म तथा वर्षा काल में बिच्छुओं का भी बड़ा प्रकोप होता था। बड़े महाराज श्री स्वामी शिवानन्द जी बिच्छू के काटने पर उसको झाड़ने का मन्त्र जानते थे, बिच्छू काटा हुआ व्यक्ति महाराज की कुटिया पर रोता हुआ जाता और हँसता हुआ लौटता था, बाद में यह मन्त्र महाराज ने श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज को भी बतलाया।

१९४३ दिसम्बर का अन्तिम सप्ताह विश्वनाथ मन्दिर की प्राण-प्रतिष्ठा की धूमधाम से परिपूर्ण रहा। प्राण-प्रतिष्ठा का कार्य पूर्ण होने पर मन्दिर के पुजारी के रूप में भी उस समय के श्रीधर राव जी को ही यह उत्तरदायित्व निभाने का कार्य सौंपा गया। श्रीधर राव जी और श्री पूर्णबोध स्वामी जी मिल कर पूजा आदि का कार्य सम्पन्न करते थेह्नह्नऔर इतना ही नहीं, दोनों जंगल जा कर पूजा के लिए बिल्वपत्र तथा फूल तोड़ कर लाते थे, ग्रीष्मऋतु में अमलताश के फूलों की बड़ी-बड़ी सुन्दर मालाएँ भगवान् के लिए बनाते थे।

प्रेस बिल्डिंग के कुछ कक्षों में शिवानन्द प्राइमरी स्कूल की कक्षाएँ लगती थीं। इन कक्षाओं में अध्यापन-कार्य को भी श्री स्वामी जी ने बहुत ही सुन्दर ढंग से निभाया है। आपका पढ़ाने का तरीका अन्य सभी से भिन्न तथा बहुत आत्मीय होता था। पढ़ने वाले बालक चाहते थे कि आप ही पढ़ाते रहें। आपने इंगलिश पढ़ाने का भार अपने ऊपर लिया हुआ था। श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज बच्चों को दण्डित करने के पक्ष में नहीं थे। आपने कभी किसी को दण्डित नहीं किया, जब कि अन्य जन किसी-न-किसी प्रकार का दण्ड अवश्य देते थे।

श्री स्वामी जी महाराज ने आश्रम में 'योगा म्यूजियम' की स्थापना की थी। चित्रों और चार्ट के द्वारा आपने योग के सभी सोपानों को भली-भाँति समझाया था। श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज आपके इस 'योगा म्यूजियम' से इतने प्रभावित थे कि आश्रम में आने वाले सभी गणमान्य व्यक्तियों को 'योगा म्यूजियम' में लाते और चिदानन्द जी महाराज को उन्हें समझाने के लिए कहते। हमारे श्री स्वामी जी महाराज ने एक बार भारत के राष्ट्रपति तथा महान् दार्शनिक सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन को इस

'योगा म्यूजियम' का दर्शन कराया तथा उसके सम्बन्ध में स्वयं सब बतलाया।

दुःखियों के मसीहा

श्री स्वामी जी महाराज शिवानन्द आश्रम में बुद्धपूर्णिमा के दिन पधारे थे। यह आपकी गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज से पहली भेंट थी। आश्रम आते समय मार्ग में इन्होंने कुष्ठरोगियों को सड़क के किनारे-किनारे बैठे देखा। उनके शरीर के घाव, खुले में बैठे रहने के कारण, सभी को देखने में आते थे तथा उनका माँगने का ढंग भी बहुत ही हृदय-विदारक होता था। उनको देख कर आपके मन में सहज ही दया का भाव उमड़ आया और आपने अपने मन में विचार किया कि, 'इनके लिए सम्मानजनक जीने का उपाय होना चाहिए। यदि भगवान् की इच्छा हुई और मैं कभी कुछ करने की स्थिति में हुआ तो इनके लिए अवश्य ही कुछ करूँगा।' भगवान् ने वह दिन दिखाया और जब स्वामी जी जनरल सेक्रेटरी बने तो उन्होंने कुछ सहायता अपनी संस्था से तथा कुछ सहायता काली कमली से और कुछ अनुदान सरकार से ले कर जिले के अधिकारियों को भी इस कार्य में सम्मिलित कर, इन रोगियों के खाने की और रहने की व्यवस्था करायी ताकि ये सड़क के किनारे बैठ कर भीख न माँगें, और कुष्ठरोगियों को सम्मानजनक जीवन जीने की राह दिखायी। आपके ही अथक प्रयास का फल है कि ब्रह्मपुरी बस्ती में निवास करने वाले रोग-मुक्त हैं और दरी तथा आसन आदि कपड़ा बुन कर तैयार कर रहे हैं। इस प्रकार उनको समाज का उपयोगी सदस्य बनाया। लक्ष्मणझूला बस्ती में तथा ढालवाला बस्ती में रहने के लिए कमरे बना कर दिये एवं चिकित्सा आदि की भी व्यवस्था की।

एक समय मैं महाराज जी से मिलने 'गुरु निवास' पहुँचा, देखता क्या हूँ कि महाराज गाड़ी में बैठ कर जाने के लिए तैयार हैं। मुझे देखते ही उन्होंने कहा, ''ठीक है, ओम! आओ, तुम भी हमारे साथ आओ।'' मैं सहर्ष स्वामी जी के साथ गाड़ी में बैठ गया। थोड़ी देर में गाड़ी ढालवाला कुष्ठ बस्ती में जा कर रुकी, वहाँ पहले से प्रतीक्षारत आश्रमवासी और बस्ती के निवासियों ने महाराज जी का स्वागत किया, और अपने लिए निर्मित तथा मरम्मत कराये कमरे तथा बैठने के लिए स्थान का महाराज को निरीक्षण कराया। वहाँ सत्संग, भजन, कीर्तन के लिए भी सुन्दर स्थान था जहाँ बैठ कर महाराज जी ने कीर्तन किया और सभी स्त्री-पुरुषों की व्यथा-कथा सुनी और समस्याओं के समाधान हेतु निर्देश दिये। एक कुष्ठरोगी बहुत ही प्रसन्न था, उसने कीर्तन में बढ़-चढ़ कर भाग लिया तथा किसी प्रकार की कोई माँग भी नहीं रखी। स्वामी जी की वापसी के समय आगे चल कर बड़ी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए वह महाराज की जय-जयकार कर रहा था। स्वामी जी ने पूछा, ''क्या बात है भाई, तुम बड़े खुश हो?'' उत्तर था, ''हाँ, महाराज! खुशी की बात है, आज हमारे भगवान् हमारे घर पधारे हैं। आपकी कृपा से महाराज हमारे रहने का, खाने का, कपड़े आदि का प्रबन्ध हो गया। और क्या चाहिए, सब तो मिल गया। रहा रोग तो महाराज, यह तो हमारे कर्मों का भोग है। यह तो हमें भोगना ही पड़ेगा।'' महाराज उसकी बात से बड़े प्रसन्न हुए और कहा, ''तुमने जीने की कला सीख ली है।''

इसी बीच एक बीड़ी बेचने वाला साइकिल पर पुरानी फिल्मों के गीत बजा कर बीड़ी का प्रचार करता हुआ आ पहुँचा और बीड़ी बेचने के लिए तरह-तरह के गुण बतलाने लगा। महाराज ने कहा, ''क्यों भाई! तुम बीड़ी का गुणगान कर रहे हो, कोई और अच्छी चीज बेचो।'' तुरन्त वह बोला, ''महाराज! बीड़ी बेच कर, कमा कर खाता हूँ, भीख नहीं माँगता।''

महाराज ने सोचाह्वह्व''यह ऐसे क्यों कह रहा है। तब उन्होंने उसे गौर से देखाह्वह्ववह एक हाथ से विहीन था और एक हाथ से ही सब कार्य कर रहा था। यह देख कर और सुन कर महाराज ने उससे कहा, ''अब आप कहाँ जायेंगे?'' उत्तर था, ''स्वर्गाश्रम।'' ''ठीक है, तब रास्ते में इस प्रकार की बिल्डिंग है, उसके बाहर 'गुरु निवास' लिखा है, आप थोड़ा वहाँ रुक कर जाना।'' वह व्यक्ति वहाँ रुका, महाराज जी ने एक पैकेट बना कर उसके लिए भिजवाया और कहा कि ''उससे कहनाह्वह्वगुरु महाराज स्वामी शिवानन्द जी महाराज का प्रसाद है।'' कोई जान नहीं, पहचान नहीं; पहले कभी मिले नहीं, बाद में पता नहीं कभी मिलेंगे या नहीं; पर उस अनजान को जो प्रसन्नता महाराज ने दी, उसकी क्या कोई कल्पना कर सकता है?

दूसरों को खुशी, किसी के चेहरे पर मुस्कान, वस्त्रहीन को वस्त्र, रोगी को औषधि इसके लिए सदैव प्रयत्नशील रहना महाराज के स्वभाव का एक स्वाभाविक अंग बन गया है। ऐसे कार्यों के अनेकों उदाहरण हैं, जिन्हें गिनाना सम्भव नहीं है। इन्हीं सब बातों के साथ-साथ महाराज के स्वभाव में है कि यदि किसी से कुछ सेवा ली है और उचित पारिश्रमिक भी दे दिया है, तो भी उसका उपकार मानना और उसको धन्यवाद करना।

आजकल जहाँ गढ़वाल विकास निगम का कार्यालय है, कैलासगेट के समीप, वहाँ पहले वर्षाऋतु में नदी बहा करती थी, नदी का प्रवाह भी बहुत तेज हुआ करता था। कभी-कभी तो प्रवाह में से पार उतारने के लिए टिहरी महाराजा के हाथी की सेवाएँ भी ली जाती थीं। सवारी के लिए केवल ताँगा होता था, वह भी नदी के बढ़ने पर बन्द हो जाता था। ऐसे समय में आश्रम में ऋषिकेश बाजार से दैनिक उपयोग की वस्तुएँ, विशेष रूप से आश्रम के लिए सब्जी आदि पहुँचाना एक बड़ा विकट कार्य था। इस विकट

कार्य को सहज ही सुलभ बनाना एक नेपाली कुली का काम था। सम्भवतः उसका नाम मनबहादुर था और सब लोग उसको 'बहादुर' के नाम से सम्बोधित करते थे। यह व्यक्ति ऋषिकेश से पीठ पर सब्जी एवं अन्य आवश्यक वस्तुएँ लाद कर नदी में से पार होते हुए आश्रम पहुँचाता था। स्वामी जी महाराज उचित पारिश्रमिक ही नहीं देते थे, हृदय से आभार भी व्यक्त करते थे।

यही बहादुर नाम का बहादुर व्यक्ति समय की चपेट में आ कर अस्वस्थ रहने लगा, स्वामी जी महाराज उसके स्वास्थ्य और औषधि की आवश्यकता का सदैव ध्यान रखते थे। मैंने स्वयं वह पत्र पढ़ा है, जिसमें श्री महाराज ने अमेरिका से बहादुर के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में जानकारी चाही थी और इतना ही नहीं, श्री विमलानन्द जी को अपने पत्र में निर्देश दिया था कि अमुक-अमुक वस्तुएँ ले कर मनबहादुर के पास जाना और उसके चरण छूना तथा मेरी ओर से कुशल-क्षेम पूछना और 'यह गुरु महाराज स्वामी शिवानन्द जी का प्रसाद आपके लिए है' ऐसा बोलना। इस प्रसाद में अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त आर्थिक प्रसाद भी था। आजकल तो लोग सगे-सम्बन्धियों का ध्यान नहीं करते, महाराज तो अपरिचितों को परिचित बना लेते हैं, गैरों को अपना बना लेते हैं। वास्तव में उनके लिए कोई गैर है ही नहीं, सभी अपने हैं।

'चिदानन्द जी अकेले ही दस डाक्टरों के समान हैं', श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने एक समय उनकी चिकित्सीय सेवा देख कर ऐसा कहा था। काफी पुरानी बात है। हरिद्वार और ऋषिकेश के बीच प्राइवेट बस सर्विस चलती थी जो लक्ष्मणझूला तक जाती थी। इसी सर्विस की एक बस एक बार लक्ष्मणझूला जाते समय आश्रम से आगे चल कर तपोवन सराय के

समीप एक मोड़ काटते समय नीचे गहरे नाले में गिर गयी। सभी यात्रियों को चोटें आयीं। केवल एक छोटा बच्चा ऐसा था जिसको चोट नहीं आयी थी, बाकी सभी यात्री घायल हो गये थे। इस दुर्घटना की सूचना जैसे ही आश्रम पहुँची वहाँ से सभी संन्यासी और ब्रह्मचारी दुर्घटना-स्थल की ओर दौड़ पड़े तथा वहाँ से सभी घायल व्यक्तियों को उपचारार्थ आश्रम ले आये, यहाँ आश्रम में श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के निर्देश से तथा श्री श्रीधर राव जी के सेवाभावी इस कार्यक्रम में अपने-अपने क्षेत्र के सभी आश्रमवासी सहयोग करने लगे। कोई पट्टी कर रहा था, कोई दवा पिला रहा था, कोई लंगर से चाय बना कर ला कर मरीजों को पिला रहा था, कोई बिस्तर लगा रहा था और फोटो खींचने वाले विभाग के सर्वेसर्वा श्री शारदानन्द जी फोटो और फिल्म खींचने में व्यस्त थे। अर्थात् सम्पूर्ण आश्रम ही सेवा-कार्य में लगा था। उस दिन श्री स्वामी चिदानन्द जी की सेवा तथा लगन और परिश्रम को देख कर श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने कहा था, 'Chidanandaji is equalent to ten doctors.'

१९५३ में आश्रम में श्री स्वामी परमानन्द जी ने गुरु महाराज श्री स्वामी शिवानन्द जी के नेतृत्व में पार्लियामेंट ऑफ रिलीजन का आयोजन किया। आश्रम में यह एक बहुत बड़ा कार्यक्रम आयोजित किया गया था, जिसमें देश-विदेश के सभी धर्मों के लोगों ने भाग लिया था। श्री स्वामी चिदानन्द जी का योगदान इस कार्य में विशेष रूप से सराहनीय था।

मस्त फकीर

महाराजश्री योग साधना कुटीर के प्रथम व द्वितीय कक्ष (रूम) में निवास करते थे। मुझे इन कक्षों में महाराज के साथ निवास करने का

सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अत्यधिक निकटता बहुत-सी औपचारिकताओं को समाप्तप्राय कर देती है। ऐसे में ही एक दिन भूल से, या कहो अज्ञानतावश एक अपराध मुझसे हो गया। मुनिकीरेती का विकास आज जो आप देखते हैं, १९५३ में ऐसा न था। मैं कक्षा १० में पढ़ता था और विद्याध्ययन के लिए ऋषिकेश जाया करता था। एक दिवस जैसे ही मैं स्कूल जाने के लिए तैयार हुआ तो क्या देखता हूँ कि मेरी चप्पल टूटी हुई है। आश्रम के आस-पास के क्षेत्र में कहीं भी उसकी मरम्मत कराने का साधन न था। अब स्कूल कैसे जाऊँ? सोचाब्रह्मस्वामी जी तो सारा दिन अधिकांशतः कमरे में ही रह कर कार्य करते हैं। चलो, स्वामी जी की चप्पल पहन कर जाता हूँ, मेरा और महाराज के पाँव का नाप एक ही था। मैंने महाराज को कहा कि मेरी चप्पल टूटी हुई है, उसको मैं ठीक करने के लिए ले जाता हूँ और आपकी चप्पल पहन कर चला जाता हूँ। महाराज ने तुरन्त स्वीकृति दे दी। मैं चप्पल पहन कर चला गया और लौटते समय अपनी चप्पल ठीक करा के ले आया और स्वामी जी को बतला दिया कि मैं चप्पल ठीक करा लाया हूँ और आपकी चप्पल यहाँ रखी है। महाराज ने कहा, ''नहीं, ये दोनों अब तुम्हारे ही उपयोग के लिए हैं,'' और महाराज ने उसी दिन से नंगे पाँव रहना शुरू कर दिया। केवल आश्रम में ही नहीं, आश्रम के बाहर दिल्ली या अन्य किसी और स्थान पर जाते तो भी नंगे पाँव ही जाते। उस समय तो मुझे कुछ ज्यादा एहसास नहीं हुआ। एक बार महाराज दिल्ली से आश्रम के लिए आने का कार्यक्रम बना रहे थे। शिवरात्रि का समय समीप था। दिल्ली के अनेक भक्तों को, जिनमें मेरे पिताजी भी सम्मिलित थे, आश्रम शिवरात्रि पर चलने के लिए प्रोत्साहित किया और उनमें अधिकांश ने आश्रम आने का कार्यक्रम बना लिया। परन्तु सबको तो आश्रम भेज दिया और अपने लिए कहा कि, 'मैं बाद में आता हूँ आप लोग चलें।' एक कहावत है, ''आई मौज फकीर की, दिया झोंपड़ा फूँक।'' ऐसी ही मौज-मस्ती में आप दिल्ली से आश्रम के

लिए पैदल ही चल पड़े। मार्ग में पड़ने वाले गाँवों में भिक्षा करना और भगवत्स्मरण करते हुए अपनी यात्रा पर चल पड़ना, यह कार्यक्रम था। चलते-चलते पाँवों में छाले पड़ गये। अब चलना दूभर हो गया, फिर भी धीरे-धीरे चलना प्रारम्भ रखा। प्रभु की माया देखिए। एक ट्रकवाला इनके समीप आ कर ट्रक रोकता है और स्वयं पूछता है, ''महाराज, हरिद्वार जायेंगे क्या?'' महाराज ने स्वीकृति में 'हाँ' कहा और उसने तुरन्त ही अपने पास वाली सीट पर महाराज को बिठला लिया। बैठने से पूर्व महाराज ने उसको यह भी बतला दिया कि भाई मेरे पास आपको देने के लिए पैसा आदि कुछ नहीं है। इस पर उसने कहा, ''महाराज, आप चिन्ता मत कीजिए, आराम से बैठिए।'' इस प्रकार महाराज हरिद्वार पहुँचे और वहाँ मेरे चाचा जी के यहाँ विश्राम किया, गंगा-स्नान किया और उनसे कुछ पैसे ले कर ऋषिकेश आश्रम पहुँचे और आ कर पूछने पर यह वृत्तान्त सुनाया। महाराज श्री स्वामी शिवानन्द जी को यह ज्ञात हो गया था कि आजकल चिदानन्द जी नंगे पाँव रहते हैं। उन्होंने भी कभी कुछ नहीं कहा। एक आमन्त्रण महाराज को इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से प्राप्त हुआ वहाँ 'लेक्चर' (प्रवचन) देने के लिए जाना था। बड़े महाराज ने आपको बुलाया और इलाहाबाद यूनिवर्सिटी जाने के लिए कहा और साथ ही यह परामर्श भी दिया कि नंगे पाँव नहीं जाना, चप्पल पहन कर जाना। तब ये नंगे पाँव रहने का सिलसिला समाप्त हुआ।

यात्रियों के निर्देशक

आजकल बदरीनाथ यात्रा बड़ी सुगम है। पहले जब अधिकांश मार्ग पैदल ही तय करना पड़ता था, तब बहुत कठिनाई का सामना यात्रियों को करना पड़ता था।

यात्रा के दिनों में बदरीनाथ, केदारनाथ जाने वालों का ताँता लगा रहता था। अनेकों भक्त जन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज से आज्ञा लेने और यात्रा के लिए परामर्श लेने आते थे, और स्वामी जी उनको सहर्ष यात्रा में आने वाली कठिनाइयों से अवगत कराते थे कि मार्ग में आपको किन-किन बातों का ध्यान रखना है, कौन-कौन-सी औषधियाँ साथ ले जानी हैं, आवश्यक वस्तुओं में टार्च, मोमबत्ती, माचिस, लाठी, कपड़े के जूते आदि वस्तुओं के बारे में बतलाते। कहाँ ठहरना उचित रहेगा और कौन-कौन-से स्थान दर्शनीय हैं, वैसे तो समस्त उत्तराखण्ड ही दर्शनीय है; परन्तु विशेष स्थानों का उल्लेख इस प्रकार करते जैसे यात्री को यहीं बैठे सब दर्शन करा देंगे। एक दिन मेरे मन में यह प्रश्न उठा कि जब से मैं स्वामी जी को जानता हूँ, तब से अब तक तो मैंने कभी स्वामी जी को बदरीनाथ जाते न देखा न सुना, तो ये बदरीनाथ कब गये। मैंने स्वामी जी से पूछ ही लिया, ''स्वामी जी! आप बदरीनाथ कब गये थे?'' तब स्वामी जी ने बतलाया कि मैं तो अभी तक बदरीनाथ यात्रा पर गया ही नहीं। ''तो आप सभी को यात्रा का वर्णन ऐसे सुनाते हैं जैसे आप स्वयं ही कई बार हो आये हों, पूरा मार्ग-दर्शन आपके वृत्तान्त में होता है।'' ''प्रत्येक व्यक्ति जो मुझसे मिल कर जाता है, वह लौट कर अपनी यात्रा का वर्णन मुझे सुनाता है, उसे सुन-सुन कर मेरे पास इतना अनुभव इकट्ठा हो गया है कि जब कभी मैं यात्रा पर जाऊँगा, तो मुझे ऐसा नहीं लगेगा कि मैं यहाँ पहली बार आ रहा हूँ।'' यह है, 'अन्यों के अनुभव से स्वयं लाभान्वित होना और अन्यों को लाभ पहुँचाना।'

भगवत्कृपा

आश्रम में निवास करते हुए अनेकों बार आपके साथ समीपवर्ती जंगलों में भ्रमण के लिए जाने का अवसर प्राप्त हुआ। ऐसे ही एक अवसर

पर आपने बतलाया कि आश्रम के पीछे जो जंगल है, इसमें एक दिन मैं और रामचन्द्र स्वामी जी भ्रमण करते-करते बहुत दूर निकल गये। वापस लौटते समय सायंकाल का समय हो गया, ऊपर से घनघोर घटा घिर आयी। कुछ तो सायंकाल के कारण, कुछ घनघोर घटा के कारण जल्दी ही अन्धकार हो गया और अन्धकार भी ऐसा कि दिखायी देना बिलकुल ही बन्द हो गया वर्षा आरम्भ हो गयी, वर्षा भी मूसलाधार थी। मैंने और रामचन्द्र स्वामी जी ने यह निश्चय किया कि जहाँ हैं, वहीं बैठ जाते हैं, अँधेरे में कहाँ भटकेंगे, मार्ग तो दिखलायी नहीं पड़ रहा है। हम दोनों सारी रात एक ही स्थान पर बैठे रहे। जंगली जानवरों की आवाजें रात्रि को और भी भयंकर बना रही थीं। एक ही स्थान पर बैठ-बैठे भजन करते हुए सारी रात्रि व्यतीत कर दी। प्रातःकाल हुआ, रोशनी दिखलायी पड़ी, वर्षा भी समाप्त हो चुकी थी। चलने को जैसे ही उद्धत हुए कि क्या देखते हैं, जहाँ हम बैठे थे, उससे आगे एक कदम भी बढ़ाते तो इतनी गहरी खाई थी कि जीवित रहने का तो प्रश्न ही नहीं था। भगवान् का धन्यवाद किया कि कैसे समय पर परमात्मा ने सुबुद्धि प्रदान की, कि यहीं बैठ जाओ, आगे मत बढ़ो! परमात्मा की कृपा के लिए बारम्बार धन्यवाद करते हुए और उस परम रक्षक का स्मरण करते हुए आश्रम लौटे।

ऐसी दैवी कृपा भगवान् ने अनेकों बार हम पर श्री स्वामी जी को माध्यम बना कर की है। महाराजश्री को गर्मी बहुत सताती है। ग्रीष्मकाल उनके लिए कष्टदायक होता है। ऐसे ही एक समय ग्रीष्मकाल में आप विश्वनाथ मन्दिर की छत पर शयन के लिए जाया करते थे। मन्दिर का निर्माण-कार्य यद्यपि पूर्ण हो चुका था, तो भी मन्दिर के आस-पास ईंटें पड़ी हुई थीं। मन्दिर-निर्माण के उपयोग में आने वाली लकड़ी की सीढ़ी लगी हुई थी। इसी सीढ़ी के द्वारा महाराज मन्दिर की छत पर सोने के लिए जाया करते

थे। एक रात्रि को गहन निद्रा में थे, वर्षा आ गयी। उन दिनों आजकल की तरह आश्रम बिजली में जगमगाता न था, चारों ओर अन्धकार था। कुछ तो निद्रा का प्रभाव, कुछ अन्धकार की गहनताह्नह्नमहाराजश्री सीढ़ी किस दिशा में है, यह भूल गये और एकदम पाँव नीचे की ओर कर दिया। परिणामतः आप ईंटों के ढेर पर आ कर गिरे। काफी चोट आयी, पाँव में उस गहरी चोट का निशान अभी तक है। परन्तु प्रभु ने जीवन की रक्षा की, नहीं तो इतने ऊपर से ईंटों के ढेर पर गिर कर कुछ भी घटना घट सकती थी।

अध्यक्ष (प्रेसिडेन्ट) बना दिये जाने के कुछ माह पश्चात् आपके मन में केदारनाथ भगवान् के दर्शन करने की इच्छा हुई। आपने हमारे साथी मित्र सुरेशानन्द जी को अपने पास बुलाया और यात्रा पर अपने साथ चलने के लिए कहा। सुरेशानन्द जी यह आमन्त्रण पा कर बहुत प्रसन्न थे। निर्धारित दिवस पर यात्रा आरम्भ की गयी। मन्दिर के कपाट बन्द होने का समय समीप था। श्री स्वामी जी और सुरेशानन्द जी के अतिरिक्त एक कुली भी सामान के लिए साथ ले लिया था। बस का और पैदल का सफर पूरा कर गौरीकुण्ड पहुँच गये थे, यहाँ से यात्रा और कठिन थी। अचानक मौसम खराब हो गया, इसी खराब मौसम में चल पड़े। साथ में सहायता के लिए लाये गये कुली को आगे चल कर बुखार आ गया। अब उसके लिए अपने-आपको ले कर चलना कठिन हो गया, वह सामान क्या ले जाता। उससे सारा सामान सुरेशानन्द जी ने ले लिया, कुछ हल्का सामान स्वामी जी ने भी लिया और चलते रहे। यात्रा का आखिरी दिन होने के कारण मार्ग की सभी दुकानें तथा आवास के साधन बन्द हो चुके थे, मार्ग में इन तीन यात्रियों के अतिरिक्त कहीं कोई मनुष्य तो क्या पक्षी भी दिखलायी नहीं पड़ रहा था।

घनघोर घटा घिर आयी, तेज तूफान चलने लगा। थोड़ी देर बाद बर्फ गिरनी शुरू हो गयी, बहुत जल्दी सारा मार्ग बर्फ की सफेद चादर से ढक गया। अब तो टार्च की रोशनी भी मार्ग दिखलाने में सहायक नहीं रही, क्योंकि सारा मार्ग ही सफेद हो गया था। कहाँ मार्ग है, कहाँ नहींह्लह्लकुछ पता नहीं चल रहा था। बहुत ही परेशानी में थे। भगवान् ने कृपा की, पीछे से एक व्यक्ति ने आवाज दी। पास आने पर ज्ञात हुआ कि यह व्यक्ति केदारनाथ डाक ले कर जाता है। आज इस यात्रा सीजन की आखिरी डाक केदारनाथ ले जा रहा था। उसने बतलाया कि सब-कुछ बर्फ की सफेद चादर से ढक जाने के कारण बहुत-सी जगह मार्ग का पता नहीं चलेगा, कहीं भी गिर जाने की सम्भावना है; अतएव मेरे पीछे-पीछे चले आओ, मेरा तो यह रोज का देखा-भाला मार्ग है। उसके पीछे-पीछे चलते हुए केदारनाथ पहुँचे। रात्रि हो चुकी थी। वह इन्हें धाम का मार्ग बतला कर अपने गन्तव्य की ओर चला गया। सम्पूर्ण धाम बन्द करके लोग नीचे चले आये थे और जो रह गये थे, वे द्वार बन्द कर अन्दर विश्राम कर रहे थे। कहीं कोई रोशनी नजर नहीं आ रही थी। ठण्ढ के कारण सम्पूर्ण शरीर बर्फ बन गया था, चलने और बोलने तक की हिम्मत नहीं थी। किसी प्रकार साहस जुटा कर चिल्लाये कि यहाँ कोई है जो हमें ठहरने के लिए स्थान दे। काफी चीखने-चिल्लाने के बाद एक पण्डित जी ने आवाज सुनी और बाहर आये तथा इन तीनों यात्रियों को अपने आवास में ले गये। अन्दर अग्नि जलती देख कर ये उधर ही बढ़ने लगे तो पण्डित जी ने मना किया कि तुरन्त आग के पास नहीं जाना। घी गर्म करके इनकी मालिश की, चाय आदि बना कर पिलायी तब आग के समीप जाने दिया। पण्डित जी की सेवा से स्वामी जी बहुत प्रसन्न हुए। इस व्यक्ति से हमारा कोई परिचय नहीं, अपने बारे में हमने इनको कुछ बतलाया नहीं, निःस्वार्थ सेवा इतनी फलीभूत हुई कि इस समय

तो महाराज ने जो-कुछ सेवा का मेवा देना था, वह तो दिया ही, इसके बाद भी हमेशा स्वामी जी इन पण्डित जी के लिए केदारनाथ जाने वालों के द्वारा कुछ-न-कुछ सदैव भिजवाया करते थे। इस प्रकार केदारनाथ भगवान् ने अपने भक्तों की रक्षा की और हम सब पर भी अपनी कृपा का प्रसाद महाराज को माध्यम बना कर किया।

एक बार दक्षिण भारत के दौरे पर रहते हुए एअर पोर्ट (हवाई अड्डे) कार में जा रहे थे। अचानक ब्रेक फेल हो जाने के कारण ड्राइवर को एक स्थान पर कार को टक्कर के द्वारा ही रोकना पड़ा। उससे महाराज के शरीर में जो पीड़ा हुई, वह आज तक विद्यमान है। इस प्रकार अनेकों बार परम पिता ने रक्षा कर हम सभी पर अपने अनुग्रह की वर्षा की। हम सभी उस परमेश्वर का बारम्बार धन्यवाद करते हैं और साथ ही प्रार्थना करते हैं कि भगवान् यह दया सदैव बनाये रखना!

मातृ-प्रेम-प्रदाता

आश्रमवासी सभी बालकों को आपका स्नेह पितृवत् ही नहीं मातृवत् प्राप्त था। आप सभी का इतना ध्यान रखते थे कि सभी ने आपके अमेरिका प्रवास के समय भी किसी-न-किसी रूप में आपकी उपस्थिति को महसूस किया है। हमारे बीच के स्वजनों में से एक श्री पाल जी थे, जिनका पूरा नाम रामरक्षपाल था और स्वामी जी ने उनके गुणों से प्रभावित हो कर उनका नाम नादचित्तस्वरूप दिया था। यह श्री पाल जी जब भी कभी महाराज को पत्र लिखने बैठते थे तो इनका सम्बोधन माँ के रूप में ही होता था। और सही भी है। सद्गुरु माँ ही होते हैं, जैसे एक जन्म माँ देती है वैसे ही आध्यात्मिक जगत् में एक जन्म सद्गुरु देते हैं, और इस प्रकार इनका स्थान माँ का ही

होता है। हम सदैव माँ को ही प्रथम स्मरण करते हैं। चाहे हम 'त्वमेव माता च' कहें अथवा 'सीताराम' कहें या 'राधाकृष्ण' कहें, 'उमाशंकर' कहेंह्लह्लप्रथम स्थान इस प्रकार माँ का ही है।

आज के पाठकों को शायद विश्वास नहीं होगा कि स्वामी जी महाराज ने कई बार अनेकोंह्लअवसरों पर भोजन, रस्क अथवा बिस्कुट आदि इस प्रकार से खिलाये हैं, जैसे एक माँ अपने बच्चों को खिलाती है। हमारे एक साथी थे श्री रामरतन जी। वह स्वामी जी को बहुत चाहते थे, परन्तु कई बातों पर स्वामी जी से लड़ते भी बहुत थे। जब वे महाराज से लड़ते थे तो स्वामी जी उनकी बात भी सुनते रहते और उनके लिए रस्क पर मक्खन भी लगाते रहते थे और जब प्लेट में रख कर उनको देते तो वह कहा करते थे, ''मुझे क्या आपने सुरेश और ओमप्रकाश समझ रखा है जो मक्खन टोस्ट या रस्क खा कर खुश हो जाऊँगा। मैं नहीं खुश होने वाला, मुझे आप पर बहुत गुस्सा है।'' इन रामरतन जी की एक बड़ी प्रबल इच्छा थी कि जैसे श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने आल इण्डिया टूर ट्रेन द्वारा किया था, हालाँकि इस टूर में अन्य महात्माओं के अतिरिक्त श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज भी सम्मिलित थे, परन्तु वह अलग से एक टूर स्वामी चिदानन्द जी महाराज का आर्गनाइज करना चाहते थे। इसके लिए स्वामी जी की स्वीकृति भी उन्होंने प्राप्त कर ली थी। परन्तु ईश्वर के यहाँ से उनका बुलावा छोटी अवस्था में ही आ गया और वे प्रभु को प्यारे हो गये। आल इण्डिया टूर क्या, महाराज ने पूरा विश्व ही अपना बना डाला था। विश्व-भ्रमण ऐसे हो गया जैसे सभी दिशाओं को विजय कर लिया हो, विश्व में सभी जगह आपसे उपदेशामृत, प्यार, स्नेह तथा सम्मान पाये आत्मीय जन हैं, पूरा विश्व ही आपका कुटुम्ब है।

त्याग और तपस्या की मूर्ति : श्री स्वामी चिदानन्द जी

श्री स्वामी जी महाराज के घर में जमींदारी थी, जमींदारी के सुख-वैभव को देखा और त्याग दिया। आपके पूर्व आश्रम का घर श्री स्वामी विमलानन्द जी ने देखा है। बहुत बड़ा घर था जिसमें टेनिस कोर्ट भी था। यूरोपियन लोग भी यहाँ टेनिस खेलने आया करते। परन्तु उस वैभव को भी त्याग दिया, और चल पड़े वैराग्य-पथ के पथिक बन कर। वैराग्य-मार्ग में भी जब आश्रम का जनरल सेक्रेटरी पद बड़े गुरुमहाराज देने लगे तो यथाशक्ति मना किया, पूरा प्रयास लगा दिया मना करने के लिए; परन्तु अन्त में गुरु-आज्ञा को बहुत ही विनम्रता से शिरोधार्य किया। अमेरिका के लिए जब आमन्त्रण मिला तब उसको भी स्वीकार नहीं कर रहे थे। आपने कहा कि मेरी इच्छा अमेरिका जाने की नहीं है, मैं तो बदरीनाथ जाना चाहता हूँ; लेकिन यहाँ भी गुरुदेव का आदेश और जनता-जनार्दन की सेवा के लक्ष्य को ले कर स्वीकार करना ही पड़ा। अमेरिका से आने के पश्चात् लगभग १४ माह आपने परिव्राजक बन कर भ्रमण किया। अमेरिका का सुख-वैभव देखने के पश्चात् कुछ तपस्यामय कष्टकारक जीवन व्यतीत करना भी आपका लक्ष्य था, ऐसा मैं समझता हूँ। श्री महाराज को यदि कहीं महल में रहने को मिला तो उतने ही दिन अथवा कुछ दिन आपका निवास किसी झोपड़ी अथवा किसी साधारण कुटिया में रहेगा, ऐसा आप करते रहे हैं।

हमारे एक साथी हैंह्वह्वपं. चिरंजीलाल जी। वह गढ़वाल में नरेन्द्रनगर के पास बनाली नामक ग्राम के निवासी हैं। एक दिन मैंने उन्हें बहुत सुस्त और चिन्तातुर देखा। कारण जानना चाहा, तो उन्होंने बतलाया कि स्वामी जी ने मुझे बुला कर कहा कि 'ओजी चिरंजीलाल, हम तुम्हारे घर चलेंगे। मैं

स्वामी जी को कैसे कहूँ कि आप मेरे घर मत चलो। मैंने सहर्ष 'हाँ' तो कह दिया; परन्तु मेरे यहाँ तो घर की अवस्था ऐसी है ही नहीं कि मैं महाराज को कहीं बिठला भी सकूँ। तभी से सोच-सोच कर मेरा बुरा हाल है।' मैंने तब उन्हें कहा कि जिस प्रभु ने वहाँ जाने की इच्छा की है, वह प्रभु अपने-आप इसका प्रबन्ध करेंगे, तुम तो केवल उनकी इच्छा का आदर करो। महाराज वहाँ गये और उन्होंने स्वयं ही बैठने की, कुछ पान करने की व्यवस्था कर डाली जैसे वह किसी अन्य का नहीं, स्वयं उनका ही घर हो। महाराज की कृपा से आज उनके एक नहीं, तीन घर हैंह्वह्वएक गाँव में, एक श्यामपुर में और एक श्रीनगर में। परिव्राजक-स्थिति में ऐसे-ऐसे स्थानों पर गये जहाँ जाने के लिए लोगों ने मना किया कि अमुक स्थान पर नहीं जाना, अन्यथा भूखा रहना पड़ेगा, वहाँ के लोग भिक्षा भी नहीं देंगे। वहाँ अवश्य गये और परमात्मा ने सब प्रबन्ध किया। उन स्थानों से भी आप प्रेम, प्यार और स्नेह तथा सम्मान पा कर लौटे। ऐसे ही एक भ्रमण-काल में आप एक दिवस के लिए गुरु महाराज का दर्शन करने आश्रम आये, दूसरे दिन निकलने का कार्यक्रम था; परन्तु बड़े महाराज की अस्वस्थता ने आपको रुकने के लिए विवश कर दिया। और तब महासमाधि का दिनह्वह्वसर्वत्र एक शोकमय वातावरण था, 'हरे राम' महामन्त्र कीर्तन सब और गुंजायमान हो रहा था, आध्यात्मिक जगत् की एक विभूति महाप्रयाण कर गयी थी, श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ब्रह्मलीन हो गये थे। सभी अपने सम्बन्धों को याद कर अश्रुपूरित थे। मैंने अपने पिताजी को इस दिन जैसे अश्रुओं से भरे देखा, ऐसा मैंने उन्हें अपनी पत्नी, मेरी माता के देहावसान पर भी नहीं देखा था। पर श्री स्वामी जी महाराज अविचल, शान्त और गम्भीर रहते हुए भी सभी प्रबन्धों को देख रहे थे, प्रबन्धकर्ताओं का मार्ग-दर्शन कर रहे थे और उन्हें सामयिक परामर्श प्रदान कर रहे थे।

षोडशी भण्डारे आदि के पश्चात् इस संस्था के अध्यक्ष पद का चयन करने के लिए मन्त्रणाएँ चल रही थीं, विचार-विमर्श हो रहे थे। सभी की निगाहें स्वामी जी की ओर लगी थीं, लेकिन स्वामी जी थे कि मान ही नहीं रहे थे। ऐसी ही एक मन्त्रणा के समय संयोग से मैं भी उपस्थित था। डा. कुट्टी माता जी स्वामी जी को अपना पूरा जोर दे कर अपनी बात मनवाने पर तुली हुई थीं, तब स्वामी जी ने कहा, ''मैं तो यहाँ आश्रम में था नहीं और ऐसे में महासमाधि हो जाती तो मैं जल्दी से आने वाला था नहीं, तब भी तो आप लोग कुछ प्रबन्ध करते, वही आप अब भी कीजिए।'' डा. कुट्टी माता जी ने उत्तर दिया, ''स्वामी जी, अब तो आप भारत में ही थे, यदि आप दुनिया के किसी भी कोने में होते तो हम आपको वहीं से ले कर आते और इस अध्यक्ष पद पर आसीन करते।'' इतने आग्रह-अनुरोध के पश्चात् भी आपने ट्रस्ट की मीटिंग में भाग लेने से मना कर दिया और कहा, ''आप सब लोग मेरी अनुपस्थिति में जैसा चाहो वैसा निर्णय लो।'' तब निर्णय आपको पदारूढ़ करने के पक्ष में था। इसकी सूचना आपको सायंकाल आश्रम लौटने पर दी गयी।

अध्यक्ष का कार्यभार आपने पूरे मनोयोग से सदैव निभाया है। अध्यक्ष का कार्यभार ग्रहण करने के पश्चात् सभी आपसे अनुरोध करने लगे कि 'आप बड़े महाराज की कुटिया में जा कर निवास करें।' स्वामी जी सुनते और मुस्करा देते। जब सभी आपसे अनुनय-विनय करने लगे, तब एक दिन आपने कहा कि, 'आप लोगों की दृष्टि में गुरुमहाराज कुटिया में नहीं हैं; परन्तु मेरे ज्ञान-ध्यान में ऐसा नहीं है। मेरे लिए महाराज आज भी वहाँ निवास करते हैं। इसलिए मैं वहाँ नहीं जाऊँगा और यहाँ योग साधना कुटीर में ही निवास करूँगा।' अनेकों वर्षों तक स्वामी जी महाराज योग साधना कुटीर के ऊपरी भाग में निवास करते रहे।

श्री काशीराम जी गुप्ता कलकत्ता वालों के सुपुत्र श्री रामनिवास जी गुप्ता ने जब 'गुरु निवास' नामक इस भवन का निर्माण कराया और महाराजश्री से इसका उद्घाटन भी करा लिया तो स्वामी जी से सानुरोध प्रार्थना की कि अब आप इसमें निवास करें; परन्तु स्वामी जी महाराज ने बहुत ही विनम्रतापूर्वक गुप्ता जी के आग्रह को स्वीकार नहीं किया।

गुप्ता जी का कहना था कि ऊपर का भाग मैंने आपके निवास के लिए ही बनाया है और नीचे का भाग अपने स्वयं के आने पर अथवा अन्य किसी समीपवर्ती के आगमन पर उपयोग के लिए है। यदि आप मेरा अनुरोध स्वीकार नहीं करेंगे तो मेरा सारा श्रम ही व्यर्थ हो जायेगा, कृपा कर इस अनुरोध को स्वीकार करें। ऐसा बार-बार आग्रह, निवेदन होता था; परन्तु महाराज आने के लिए तैयार न थे।

एक बार आपकी अस्वस्थता ने ऐसा रूप लिया कि आपको चिकित्सा हेतु देहरादून ले जाना पड़ा और वहाँ डाक्टरों के परामर्श से आपको यहाँ इस स्थान पर एकान्त और स्वच्छ वातावरण देख कर विश्रान्ति के लिए रहने का कार्यक्रम बनाया गया। स्वस्थ होने पर फिर आप ऊपर जाने के लिए कहने लगे आपके स्वास्थ्य का समाचार सुन कर गुप्ता जी भी कलकत्ते से आ गये थे, आपने पुनः अपनी प्रार्थना को दोहराया कि गुरुदेव अभी आप पूर्ण स्वस्थ नहीं हैं, कुछ दिन और विश्राम करें और धीरे-धीरे गुप्ता जी अपने अनुरोध को मनवाने में सफल हो गये। इस प्रकार गुरु निवास में निवास की व्यवस्था हुई और भवन का नाम 'गुरु निवास' तब जा कर सार्थक हुआ।

अध्यक्षीय काल

आपके अध्यक्षीय कार्यकाल में अनेकों महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये, अनेकों सुन्दर भवनों का निर्माण हुआ, साधकों तथा अतिथियों के निवासार्थ सुन्दर व्यवस्था को रूप दिया गया।

सुन्दर व्यवस्था होने से कुछ परेशानियाँ भी बढ़ीं, नये आगन्तुक साधक भी बहुत जल्दी ही कुटिया-विशेष के लिए अनुरोध करने लग जाते। ऐसे ही एक अवसर पर मैं महाराज के समीप बैठा था, तभी महाराज के पास एक ब्रह्मचारी जी आये और कुटिया के लिए अनुरोध करने लगे। सारी वार्ता सुनने के पश्चात् महाराज ने उन्हें बड़े प्रेम से समझाया, ''आज तो आश्रम में इतनी व्यवस्था है; परन्तु उस समय को याद करो कि जब हम लोग यहाँ आये थे, तब नये आने वालों का आश्रय-स्थल सबसे पहले भजन हाल होता था। काफी समय भजन हाल में व्यतीत करने के उपरान्त तब कहीं जा कर कुटिया की व्यवस्था हो पाती थी, नित्यकर्मादि से निवृत होने के लिए जंगल जाना पड़ता था, लंगर में भोजन की व्यवस्था हेतु गंगाजी से जल भरना पड़ता था, पाकशाला में जलाने हेतु लकड़ी अपने कन्धों पर ढो कर लाते थे, कई बार तो निर्माण-कार्यों में भी हाथ बँटाना पड़ता था। सम्भव है, शायद तुम सोच रहे होगे कि महाराज तो स्वयं कुटिया में रह रहे हैं और मुझे लम्बा-चौड़ा उपदेश दे दिया, तो भाई ऐसा है कि यदि गुरु महाराज ने मेरे साथ यह उत्तरदायित्व वहन करने का जिम्मा न लगाया होता, तो सामने जो तुम वृक्ष देख रहे हो, मैं उसके नीचे फूस की झोपड़ी बना कर रहना ज्यादा उत्तम समझता।'' महाराज के समझाने के उपरान्त कुछ प्रसाद ग्रहण कर ब्रह्मचारी जी प्रसन्नचित्त से विदा ले कर चले गये। महाराज ने शीघ्र ही कुटिया का प्रबन्ध करा देने का आश्वासन भी साथ ही दे दिया था।

जन्म–शताब्दी समारोह

आपके कार्यकाल में शिवानन्द जी महाराज की जन्म–शताब्दी महोत्सव एक ऐसा चिरस्मरणीय रहेगा कि इसमें भाग लेने वाले कभी भी अपने जीवन–काल में इसको भुला न पायेंगे। अनेकों पाठशालाओं, चिकित्सालयों की स्थापना जन–कल्याणार्थ विभिन्न स्थानों पर की गयी; लेकिन मुख्यालय में एक विशिष्ट पहचान दी गयी मुख्य राज मार्ग पर एक द्वार बना करह्वह्वइतना बड़ा द्वार कि इसके नीचे से दो वाहन आसानी के निकल सकते हैं। यह बदरीनाथ मार्ग पर स्थित है। वर्षा ऋतु अथवा ग्रीष्म काल में जन–मानस इसके नीचे सुरक्षा पाते हैं तथा ठण्ढा जल सेवन कर अपनी तृषा शान्त करते हैं, आश्रम के मुख्य ध्येय और शिक्षा का ज्ञान प्राप्त करते हैं BE GOOD DO GOOD (भले बनो, भला करो) के रूप में। इस द्वार के निर्माण में महाराजश्री का आशीर्वाद ही सम्बल था। ऊपर गोवर्धन धाम के समीप एक अत्यन्त सुन्दर पण्डाल बनाया गया था। वर्षा–काल था; परन्तु व्यवस्था इतनी अच्छी थी कि वर्षा का जल पण्डाल में नहीं आता था, सभी श्रोता एवं दर्शक कार्यक्रम का आनन्द बड़े सुन्दर ढंग से ले पा रहे थे और ऐसी सुन्दर व्यवस्था के लिए आश्रम के कार्यकर्ताओं तथा महाराजश्री को धन्यवाद करते थे। इस पावन अवसर पर इसी पण्डाल में अहमदाबाद से पधारे भागवत के विद्वान् श्री कृष्णशंकर शास्त्री के मुख से भागवत का सप्ताह भी एक आनन्दोत्सव के रूप में चिरस्मरणीय रहेगा। महाराज ने कार्यक्रम के सफलतापूर्वक सम्पन्न होने पर सभी आयोजकों, कार्यकर्ताओं तथा स्वयंसेवकों का धन्यवाद दिया, पर कार्यक्रम की मुख्य संचालक डा. कुट्टी माता जी का विशेष रूप से अभिनन्दन किया और इस प्रकार सभी को गौरवान्वित किया।

शताब्दी महोत्सव का कार्यक्रम बनाना और उसको विभिन्न रूपों में देश, विदेश सभी स्थानों पर संचालित करना एक अत्यधिक कठिन कार्य था; परन्तु महाराजश्री ने इस सब कार्य को अपने शिष्यों, भक्तों तथा उदारमना सज्जन महानुभावों के सहयोग से बड़े ही व्यवस्थित ढंग से और ऐसे सम्पन्न करा दिया, जैसे कोई खेल-खेल में रचना कर डाली हो। ऐसा ही एक कार्य मुझे समीप से देखने का अवसर मिला। आमतौर पर हमारे आश्रम जन, नियमित रूप से अन्य आश्रमों तथा अखाड़ों की भाँति कुम्भ में भाग नहीं लेते संस्थागत रूप में। व्यक्तिगत रूप से कोई भाग लेना चाहे तो उसके लिए कोई मनाही भी नहीं है।

कुम्भ मेला

सन् १९८६ में कुम्भपर्व हरिद्वार में होना था। महाराजश्री ने इस कुम्भ में संस्थागत रूप से भाग लेने का निश्चय किया। सभी प्रेमी सज्जनों को इसकी सूचना अनेकों माध्यमों से पहुँचा दी गयी। कुम्भनगर में सुन्दर स्थल, हरकीपौड़ी के समीप ही श्री अरुणकुमार मिश्रा जी, मेला ऑफीसर ने ऐलाट करा दिया। इस स्थल पर टैन्ट कालोनी में सभी का वास था। महाराज के लिए लगाये गये टैन्ट में 'गुरु निवास' को साकार रूप दिया गया। अन्य सभी निवासों का नाम आश्रम में बने निवासों के आधार पर हीह्वह्वअन्नपूर्णा हाल, भजन हाल, पार्वती कुटीर, योग साधना कुटीर आदि रखा गया। श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज भी यहाँ की व्यवस्था को देख कर चकित रह गये। भोजन-व्यवस्था तथा भजन-व्यवस्था यहाँ आश्रम की भाँति ही चल रही थी। महाराजश्री ने भक्तों सहित स्वयं यहाँ निवास कर सभी को प्रसन्नता प्रदान की तथा अन्य सन्तों, महात्माओं की भाँति कुम्भ में निकलने वाली शाही सवारी में भी भाग लिया। परन्तु कितना अन्तर था, अन्य महात्मा गण

जो विभिन्न वाहनों पर आरूढ़ हो कर चल रहे थे, अधिकांश आशीर्वाद की मुद्रा में थे और हमारे महाराजश्री सभी को हाथ जोड़ कर नमन कर रहे थे। महाराज का कथन कुछ इस प्रकार था कि हमारे पूर्वजों ने कैसी व्यवस्था की है कि ऐसे धार्मिक एवं पवित्र आयोजनों पर लाखों की संख्या में नर-नारी बिना किसी निमन्त्रण के पहुँच रहे हैं। यह भगवान् का विराट् रूप है, इसको नमन करना चाहिए। यह है महामानव के हृदय की विशालता!

जन्मोत्सव

इन आयोजनों से उत्साहित हो कर सभी आयोजनकर्ताओं ने महाराजश्री का जन्मोत्सव बड़े ही विशाल पैमाने पर मनाने का आशय प्रकट किया और इस प्रस्ताव को महाराज के सन्मुख विचारार्थ प्रस्तुत किया। महाराज ने बड़ी ही शालीनता से इस विचार को यह कह कर अस्वीकृत कर दिया कि आश्रम में बड़े गुरु महाराज का ही जन्म-दिन मनाना चाहिए, और साधु का जन्म-दिन कैसा? साधु का जन्म-दिन तो नित्य ही होता है, नित्य ही मनाओ। इस पर आयोजनकर्ताओं ने अपने बहुत से तर्क दिये कि महाराज ऐसे आयोजनों से सभी भक्त जन एकत्रित होते हैं तथा कीर्तन, भजन और अनेकों सन्त-महात्माओं के प्रवचन आदि से साधारण जन लाभान्वित होते हैं। आपके लिए जन्म-दिन का कोई महत्त्व नहीं है, पर सर्वसाधारण के लाभार्थ कृपा कर स्वीकृति प्रदान कीजिए। परन्तु महाराज ने अत्यधिक दबाव पड़ने पर स्वीकृति इस रूप में प्रदान की, कि एक ही स्थान पर क्यों, सभी स्थानों पर आयोजन करो और आने वाले दस वर्षों तक कार्यक्रम बनाओ और जहाँ जिस चीज की आवश्यकता हो, वहाँ उस रिक्तता को भर कर उसकी पूर्ति करो। इसी के अनुरूप कार्यक्रम बनाया गया और जहाँ विद्यालय की आवश्यकता थी वहाँ विद्यालय खोले गये,

जहाँ चिकित्सालय की आवश्यकता थी वहाँ चिकित्सा का प्रबन्ध किया गया। अनेकों महिलाओं को, जिन्हें सिलाई मशीन की आवश्यकता थी, उनकी आवश्यकता को देख कर उन्हें सिलाई मशीन प्रदान की गयी। अनेकों को महाराज की कृपा से आश्रय-स्थल प्रदान किये गये। ऐसे ही एक समय ऋषिकेश में चन्द्रभागा नदी और गंगा जी के समीप बसे हुए लोगों को बाढ़ से क्षति पहुँची तो उन्हें वस्त्र, बिस्तर, खाने का सामान आदि दे कर समयोचित सहायता प्रदान की गयी। गढ़वाल में आये भूकम्पों से क्षति का जायजा ले कर कम्बल, टीन की चादरें, वस्त्र ही नहीं अपितु इतनी छोटी बातों का महाराज ने ध्यान रखा कि पुरुषों के लिए बीड़ी आदि का प्रबन्ध और महिलाओं के लिए बिन्दी जैसी छोटी वस्तु का होना भी उनकी परम आवश्यकता समझा गया। कहने का तात्पर्य यह है कि ऐसी कठिनाई के अवसरों पर भी महाराज बड़ी से बड़ी और छोटी से छोटी वस्तु का भी ध्यान रखते हैं। उनकी दृष्टि से कोई वस्तु छूट नहीं सकती। उनके विचार की पूर्णता सबको आश्चर्यचकित कर देती है। ऐसे ही एक अवसर पर आश्रम में पधारी बम्बई की एक महिला ने अपने उद्‌गार कुछ इस प्रकार प्रकट किये थे कि 'हम अनेकों स्थानों पर गये हैं, अनेकों धार्मिक स्थलों पर जा कर आश्रमों और समाजसेवी संस्थाओं को देखा है; परन्तु 'लेना' तो सब जानते हैं, पर जिस प्रकार यह आश्रम 'देना' जानता है, इस प्रकार देना कोई नहीं जानता।'' यह सब बड़े गुरु महाराज स्वामी शिवानन्द जी तथा उनके परमप्रिय शिष्य श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज की 'कथनी' और 'करनी' में समानता का द्योतक है। वे SERVE, LOVE, GIVE (सेवा, प्रेम, दान) कहते ही नहीं, अपने कार्यों के द्वारा उसे सिद्ध भी करके दिखलाते हैं। ऐसे महान् सन्त का जन्म-दिन तो वास्तव में नित्य ही होता है।

एक अवसर पर आपको विदेशियों के एक समूह के साथ श्री स्वामी

शिवानन्द जी महाराज के जन्म-स्थान पत्तमडै (दक्षिण भारत) में सत्संग का कार्यक्रम सम्पन्न करना था, जो कि उन्हीं की प्रार्थना पर विशेष रूप से विदेशी मेहमानों के लिए ही आयोजित था इस कार्यक्रम के दौरान ही आपका जन्म-दिन २४ सितम्बर भी पड़ता था। इस अवसर का लाभ उठाते हुए अनेक सत्संग-प्रेमी सज्जनों ने पत्तमडै पहुँचने का कार्यक्रम बना डाला। जब श्री स्वामी जी महाराज को यह ज्ञात हुआ कि मेरे जन्म-दिवस पर बहुत लोग पत्तमडै आने का कार्यक्रम बना रहे हैं, तो आपने सार्वजनिक रूप से यह घोषणा की, कि 'पत्तमडै में जन्म-दिन का कोई कार्यक्रम नहीं है और मैं २४ सितम्बर को सार्वजनिक रूप से उपलब्ध भी नहीं हूँ। यदि कोई सज्जन महानुभाव वहाँ इस कामना से आना चाहते हैं तो कृपा कर अपना कार्यक्रम न बनायें तथा अपने रेलवे आरक्षण को रद्द करवा दें। किसी को ज्ञात नहीं है कि मैं २४ सितम्बर को कहाँ रहूँगा, और यदि किसी को ज्ञात हो भी जाये तो वह भी मुझसे उस दिन मिलने का प्रयास न करे अन्यथा मैं जीवन में कभी भी उसका मुँह नहीं देखना चाहूँगा, न उससे बात करूँगा, यह निश्चय जान लें।' दरअसल श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज कभी भी जन्म-दिन मनाने के पक्ष में नहीं रहे। एक बार श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने आश्रम में सभी सर्वोच्च वरीयता वाले संन्यासियों का जन्म-दिन मनाने का कार्यक्रम बनाया था। जब महाराजश्री के जन्म-दिन के बारे में पूछा गया तो आपने सरल स्वभावानुसार (तारीख) दिवस बतलाने से मना कर दिया। किसी प्रकार ज्ञात हुआ कि आपका जन्म-दिन २४ जून है, तब श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने इसकी घोषणा कर दी, कि २४ जून को चिदानन्द जी का जन्म-दिन मनाया जायेगा। आपको जब इस सम्बन्ध में बतलाया गया तो आपने इसका प्रतिवाद तो नहीं किया, न ही सही महीना बतलाया और कहा कि मैं इस दिन आश्रम में नहीं रहूँगा। जब यह बात बड़े महाराज

को ज्ञात हुई तो उन्होंने कहा कि कोई बात नहीं, उनके नहीं रहने पर भी हम जन्म-दिन मनायेंगे। इस प्रकार उनकी अनुपस्थिति में गलत माह में ही चिदानन्द जी महाराज का जन्म-दिवस मनाया गया। जब यह समाचार डिवाइन लाइफ मैगजीन में छपा तो सब जगह आपका जन्म-दिन २४ जून को ही मनाया जाने लगा। एक बार श्री स्वामी विमलानन्द जी आपके पूर्वाश्रम के भाई-बहनों से मिले, तब ज्ञात हुआ कि आपका जन्म-दिन २४ सितम्बर है। तब यह भूल सुधारी गयी। अनेकों बार आपकी उपस्थिति में जन्म-दिन मनाये गये; परन्तु आपको देखने से ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे आप सब-कुछ अनिच्छा से सहन कर रहे हैं, जैसे कोई उनके साथ जबर्दस्ती कर रहा है।

पुष्पहार

इसी प्रकार मैं अक्सर देखता था कि जब आपको किसी अवसर पर पुष्पहार पहनाये जाते थे, तब भी आपका हृदय कुछ प्रसन्न नहीं दीखता था, चेहरे के भावों से स्पष्ट ऐसा दिखलायी पड़ता था मानो जैसे आपके साथ कोई अन्याय हो रहा हो। ये भाव जब मेरे मन को छूने लगे तो मैंने स्वयं तो पुष्पमालाएँ ले जाना बन्द कर ही दिया, साथ ही अपने साथियों को भी ऐसा करने के लिए आग्रह किया। हमारे यह पुष्पमालाएँ ले जाना बन्द करने के कुछ समय पश्चात् आपने सार्वजनिक रूप से कह दिया कि मेरे लिए कोई पुष्पमालाएँ न लाया करें, इससे मुझे कष्ट होता है। पुष्पवाटिका में खिले पुष्प वातावरण को सुगन्धित करते हैं तथा पर्यावरण को दूषित होने से बचाते हैं, कृपया इस कार्य में उनको सहयोग दे, उनको पुष्पित एवं पल्लवित होने दे। मुझे बड़ी प्रसन्नता इस बात की हुई कि जो महाराज चाहते थे, वह सब उनके कहने से पूर्व ही हमारे मन में उन्होंने प्रकट कर दिया था।

परहित में सुखी

आपका हृदय, मन, मस्तिष्क सदैव दूसरों के हित तथा उनको सुख पहुँचाने की सोचता रहता है। ऐसा करने पर हालांकि अपने को कष्ट में डालना होता है, पर आप दूसरों के लिए कष्ट उठाते हैं और दूसरों को सुखी करते हैं। इस कष्ट में ही आपको आनन्द की प्राप्ति होती है।

अपने से छोटों को, अपने बालकों को स्नेह तथा सम्मान प्रदान करना आपका स्वभावगत लक्षण है। मुनिकीरेती के पूर्व-नगराध्यक्ष श्री उत्तमसिंह राणा आश्रम के ही बालकों में से एक हैं। आपके ऊपर महाराजश्री ने कृपा-वर्षा ही नहीं की है, सम्पूर्ण कृपा उँडेल दी है। बचपन से ले कर आज तक सदैव महाराज ने इतना ध्यान रखा है कि शायद माता-पिता भी इतना न कर पाते। अध्यक्ष-पद के चुनाव में खड़े होने का जब श्री राणा ने निर्णय लिया तो महाराज को इस निर्णय से अवगत कराने तथा उनका आशीर्वाद लेने, महाराज के पास 'गुरु निवास' आये। संयोगवशात् मैं उस समय वहाँ था। जब श्री राणा ने महाराज को अपने निर्णय के सम्बन्ध में बतलाया तो महाराज ने कहा कि उत्तम का निर्णय उत्तम है। श्री राणा द्वारा आशीर्वाद के लिए आग्रह करने पर महाराज को हँसी आ गयी तथा उन्होंने कहा, ''ओम, इसको पूछो कि क्या कभी तुमको ऐसा लगा कि मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ नहीं है? अरे भाई, मेरा आशीर्वाद तो सदैव तुम्हारे साथ है। गुरु महाराज का स्मरण कर अपना कार्य आरम्भ कर दो।'' ऐसे ही एक अवसर पर राणा-दम्पति के प्रति मैंने महाराज का भाव देखा है। जब श्री राणा का विवाह सम्पन्न हुआ और उन्होंने महाराज से पत्नी सहित आ कर प्रणाम तथा आशीर्वाद के लिए समय माँगा, तो महाराज ने उन्हें समय प्रदान कर दिया। कार्यवशात् आश्रम के वरिष्ठ जनों के साथ आपको उस दिन देहरादून

जाना पड़ा, लेकिन देहरादून में जब महाराज को इनको दिये समय का ध्यान दिलाया गया तो महाराज ने तुरन्त ही आश्रम प्रस्थान करने का निर्णय लिया, अन्य सभी पूछते रहे कि इतनी जल्दी क्या है। बार-बार पूछने पर आपने उत्तर दिया कि 'आज मेरी कुटिया पर राम और सीता आने वाले हैं, इसलिए मेरा वहाँ पहुँचना आवश्यक है।' ऐसे हैं आपके हृदय के उद्‌गार, जिनका स्मरण मात्र ही आपके प्रति नतमस्तक कर देता है। पूर्व नगराध्यक्ष मुनिकीरेती श्री सुरेशचन्द्र 'सुमन' भी आपके कृपापात्रों में अग्रगण्य रहे हैं, इनकी शिक्षा-दीक्षा से ले कर विवाह तथा जीवन-संग्राम में महाराज का आशीर्वाद इन्हें प्राप्त रहा है। जीवन में ही नहीं, अपितु इनके परलोक-गमन के पश्चात् भी इनका परिवार महाराज की स्नेहछाँव में पुष्पित एवं पल्लवित हुआ है। अपनों पर तथा अपने पारिवारिक जनों पर सभी स्नेह तथा कृपा करते हैं; परन्तु महाराज की कृपा तो बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय है।

एक समय आप कुछ कार्यवशात् मेरे चाचा जी के निवास पर हरिद्वार में ठहरे हुए थे। अचानक ही आपका स्वास्थ्य खराब हो गया, बहुत दिन तक ज्वर से पीड़ित रहे। इस दौरान चाचा जी ने महाराज की जो सेवा की, उसको महाराज कभी नहीं भूले। स्वस्थ होने पर एक दिन आपने चाचा जी के साथ माँ चण्डी देवी के दर्शन का कार्यक्रम बनाया, दोनों गंगापार पर्वत पर माँ चण्डी के दर्शनों के लिए पहुँचे। दर्शनोपरान्त जब चलने लगे तो चाचा जी ने आग्रह किया कि जब यहाँ तक आ ही गये हैं तो समीप ही अंजना जी का मन्दिर है, वहाँ भी दर्शन कर लेते हैं। विनोदप्रिय महाराज ने कहा कि, ''मुझे तो पुत्र-प्राप्ति की कोई कामना है नहीं, खैर चलो फिर भी दर्शन कर लेते हैं, कहीं हनुमान् जी महाराज नाराज न हो जायें कि मेरी माता जी के दर्शन करने नहीं आये।'' सुन्दर सुरम्य स्थान में माँ अंजना जी का छोटा-सा मन्दिर देख कर महाराज ऐसे ध्यानमग्न हुए कि काफी देर तक बैठे

रह गये। नेत्र खोलने पर क्या देखते हैं कि कई दर्शनार्थी वहाँ अपना चढ़ावा चढ़ा कर खड़े हैं और महाराज को मन्दिर का पुजारी समझ कर प्रसाद पाने की इच्छा रखे हुए हैं। कईयों ने कहा कि 'महाराज, प्रसाद दीजिए।' अब भक्तों को प्रसाद क्या दें? चाचा जी से कहा कि 'ओजी, इन सभी को प्रसाद दो। प्रसाद क्या दें, अपने पास तो ऐसा कुछ है नहीं, सिवाय अपने लिए बना कर लाये हुए कुछ आहार के, वही दे दो।' दोनों जनों के लिए जो आहार लाये थे, वह भक्त जनों को प्रसाद में दे दिया और स्वयं निराहार रह कर ही वापस लौट आये।

अभिनय–प्रतिभा

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज के समय में आश्रम में जब भी साधना सप्ताह मनाया जाता, तो आखिरी दिन सायंकालीन सत्संग का स्वरूप किसी नाटक के रूप में होता था। अक्सर 'दिव्य जीवन' नाटक होता था। हमारे महाराजश्री अभिनय–प्रतिभा के भी धनी हैं। आपने कई नाटकों में भाग लिया, कई नाटकों को अपने सुझाव दे कर समृद्ध किया। ऐसे ही एक अवसर पर आश्रम में सुन्दर साज–सज्जा के साथ मंच बना कर श्री सुन्दरश्याम 'मुकुट' द्वारा लिखित एवं निर्देशित नाटक 'शिवानन्द विजय' का मंचन हुआ। इसमें हमारे परिवार से मेरे पिताजी, छोटी बहन तथा स्वयं मैंने भी भाग लिया। इस नाटक में पिताजी के लिए श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज का अनुरोधपूर्ण आदेश था कि स्वामी शिवानन्द जी का अभिनय करने के लिए ठाकुर प्रभुसिंह को ही हरिद्वार से बुलाया जाये तथा अन्य किसी को यह भार न सौंपा जाये। स्वामी जी का अभिनय पिताजी बहुत ही सुन्दर ढंग से करते थे।

इस जीवन रूपी नाटक में श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज श्री स्वामी चिदानन्द जी के गुरु हैं; परन्तु इस नाटक रूपी जीवन में चिदानन्द जी महाराज श्री स्वामी शिवानन्द जी के गुरु बन कर श्री स्वामी विश्वानन्द जी

महाराज का पार्ट अदा करते हैं। यही जीवन की वास्तविकता भी है। कौन कब किसका गुरु बनेगा, कौन किसका माता-पिता होगा, कोई नहीं जानता। कब पिता पुत्र बनेगा और कब पुत्र पिता बन जायेगा, यह सब विधि का खेल विधाता को ही पता है।

शिक्षा देने का निराला ढंग

कभी-कभी महाराज का कृपा करने का ढंग बड़ा विचित्र होता है। आपकी भी रीत कुछ इस प्रकार की है, जैसे कहते हैं, ''बिन माँगे मोती मिले और माँगे मिले न भीख।'' कई बार लोगों को पूछने पर भी समय नहीं मिल पाता और जब कृपा करनी होती है, तो ऐसे करते हैं। एक बार मैं महाराज से हरिद्वार स्टेशन पर मिलने के लिए गया, आपका कार्यक्रम दिल्ली से देहरादून जाने का था और वहाँ से बार्लूगंज (मसूरी)। स्टेशन पर मुझे कुछ सामान दिया गया और साथ ही निर्देश मिला कि यह सब सामान आश्रम में पहुँचा दो। मैं तुरन्त ही आश्रम के लिए प्रस्थान कर गया; परन्तु आश्रम पहुँचने पर ज्ञात हुआ कि मेरे लिए स्वामी जी का आदेश है कि 'मैं ओमप्रकाश ड्राईवर को साथ ले कर महाराज की कार से देहरादून पहुँच जाऊँ, वहाँ से मुझे महाराज के साथ मसूरी जाना है।' आदेशानुसार मैं कार द्वारा देहरादून पहुँचा और वहाँ से महाराज के साथ मसूरी, यहाँ बार्लूगंज में तीन दिन महाराजश्री के सान्निध्य में रहा। आपके कृपापूर्ण व्यवहार का दर्शन तो कई बार हुआ है, यहाँ के दर्शन का वर्णन कुछ इस प्रकार हैह्वह्वयहाँ एक पीर की मजार है। लोग इसे बुल्लेशाह की मजार कहते हैं। महाराज के साथ भ्रमण करते हुए एक दिन इस मजार पर पहुँचे; वहाँ पहुँच कर महाराज ने स्वयं अपने हाथों से इस मजार के आस-पास सफाई की और जो हम लोग साथ थे, उन्हें भी मजार की सफाई करने का निर्देश दिया और धूप,

अगरबत्ती आदि से पूजा की। महाराज के लिए सभी पूजा-स्थल समान रूप से आदरणीय और पूजनीय हैं चाहे किसी भी धर्म के हों। एक दिन सुबह के समय आवाज आयीह्ह'ब्रेड, बिस्कुट, केक, पेस्ट्री ले लो।' मेरे मन ने तभी कहा कि महाराज अब इसको बुलायेंगे और तभी महाराज ने कहा कि 'ओजी, इस ब्रेड वाले को बुलाओ।' उसको बुलाया गया। स्वामी जी ने स्वयं उसके पास बैठ कर ब्रेड-बिस्कुट आदि क्रय किये और उसे भुगतान भी किया और धन्यवाद भी दिया। इसी समय आपको सामने से कुछ छात्रों की टोली जाती हुई दिखलायी पड़ी। आपने उन सभी छात्रों को पास बुलाया, उनसे वार्तालाप किया, कहाँ से आ रहे हैं? कहाँ जा रहे हैं? उनका कुशलक्षेम ज्ञात कर कहा कि 'आप देहरादून से पैदल मसूरी जा रहे हैं। आप अध्ययन-भ्रमण पर हैं, निश्चित ही आपको भूख लगी होगी, यह लो गुरु महाराज का प्रसाद, इसे ग्रहण करो, नाश्ते का समय भी है।' यह कह कर, सब बिस्कुट, केक आदि उन बालकों को खिला दिये। महाराज ने बहुत-कुछ बतलाया है, सिखलाया है, केवल उपदेश के द्वारा नहीं स्वयं करके दिखाया है। एक बार मेरी आश्रम में किन्हीं सज्जन महानुभाव से वार्ता हो रही थी। वह भी अन्यों की भाँति यही कह रहे थे कि स्वामी जी आश्रम में समय नहीं देते, बाहर रहते हैं, यहाँ आने वाले और यहाँ रहने वाले साधक उनके उपदेश से वंचित रह जाते हैं। मैंने उनसे कहा कि महाराज से आप लोग क्या उपदेश चाहते हैं। उन्होंने इतना करके दिखला दिया है कि उनका सारा जीवन-वृत्तान्त ही अपने-आपमें एक उपदेश है। उनका सारा जीवन ही एक सन्देश है।

अपने कष्ट, अपनी पीड़ा भूल जाते हैं दूसरों को सुखी करने के लिए। १९७४ की बात है। भारत में कई स्थानों पर आपके कार्यक्रम थे। इन कार्यक्रमों की शृंखला को जब पूर्ण करने का समय आया तो अकस्मात्

आपका स्वास्थ्य बिगड़ गया। जहाँ तक मुझे याद है, आपको पाइल्स (बवासीर) की जबरदस्त व्याधि ने घेर लिया, आप बहुत कष्ट में रहे। ऐसे समय में आपको आश्रम से ला कर रामकृष्ण मिशन सेवाश्रम, कनखल में उपचारार्थ भर्ती किया गया। बहुत पीड़ा सहते रहे। कई दिन तक आपका इलाज चला। इस बीच आश्रम से नित्य ही कोई न कोई आता रहता था। श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज नित्य ही आपके स्वास्थ्य की जानकारी प्राप्त करते रहते थे, एक दिन स्वयं कृष्णानन्द जी महाराज ने हास्पिटल आ कर आपके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की और स्थिति को देखते हुए आपसे सभी कार्यक्रमों को निरस्त करने का आग्रह किया। परन्तु स्वामी जी नहीं मान रहे थे, उनका बार-बार यही आग्रह था कि मैं जल्दी ठीक हो जाऊँगा और अपने निर्धारित कार्यक्रमों को पूरा करूँगा, लेकिन कृष्णानन्द जी महाराज ने कहा कि शीघ्र स्वस्थ होने के उपरान्त भी आपको विश्राम की आवश्यकता है, इसलिए सभी निर्धारित कार्यक्रम स्थगित किये जाते हैं। तब भी महाराज ने एक विशेष आग्रह, अनुरोध के साथ कहा कि ठीक है आप भारत में होने वाले सभी कार्यक्रमों को स्थगित करने की सूचना निकाल दें; परन्तु 'आल सिलोन कान्फ्रेंस' को स्थगित न करें, यह मेरा आपसे विशेष आग्रह है। तब ऐसा ही किया गया, और तब सिलोन श्रीलंका के सम्बन्ध में आपने बतलाया कि वहाँ के भक्त जन बहुत ही साधारण किस्म के लोग हैं, उन्होंने बहुत अथक परिश्रम कर यह आयोजन किया है। कुछ भी हो, वहाँ मैं अवश्य जाऊँगा। निर्धारित समय से कुछ दिन पूर्व जब दक्षिण भारत में पत्तमडै जा कर श्रीलंका जाने के सम्बन्ध में वार्ता हो रही थी तो मैंने महाराजश्री से पूछा कि आपके साथ कौन जा रहा है? तो ज्ञात हुआ कि कोई नहीं जा रहा, महाराज अकेले ही यह यात्रा कर रहे हैं। श्री विमलानन्द जी उन दिनों आपके साथ यात्रा किया करते थे, लेकिन वह उन दिनों जर्मनी

में थे इसलिए मैंने यह प्रश्न पूछा। अकेले यात्रा की जानकारी मिलने पर मैंने कहा कि अकेले ऐसे में जाना ठीक नहीं है, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं साथ चलना चाहूँगा। महाराज ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान कर दी और मुझे भी आपके साथ इस यात्रा में जाने का अवसर मिला। तब मैंने देखा कि श्रीलंका में जाफना में यह कार्यक्रम था और वहाँ के निवासियों ने कितनी श्रद्धा-भक्ति से इस कार्यक्रम का आयोजन किया था। सभी धर्मों के प्रतिष्ठित जन आयोजन में सम्मिलित हुए थेह्नह्नजैसे बौद्ध, ईसाई, मुस्लिम। सभी धर्मों के शीर्षस्थ जन पधारे थे, सबने अपने-अपने धर्मों के बारे में बतलाया; परन्तु महाराज के विचार सुन कर और अन्य धर्मोंह्न के सम्बन्ध में उनकी जानकारी का ज्ञान देख कर सभी आश्चर्यचकित थे कि इन्हें हमारे धर्म का भी कितना ज्ञान है और सभी धर्मों का आदर करते हुए कि किस प्रकार दिव्य जीवन यापन करना है, यह महाराज के उद्‌बोधन में सरल तथा सादगी से बतलाया गया। सभी उनके विचारों से लाभान्वित हुए और इस प्रकार आपने स्वास्थ्य ठीक न रहने पर भी लंका वासियों के मान-सम्मान को ध्यान में रखते हुए उनके परिश्रम को महत्त्व प्रदान किया।

अपनी-अपनी श्रद्धा और अपनी-अपनी भक्ति

एक श्रद्धामयी राजस्थानी वृद्ध महिला नारायणी माई के नाम से पुकारी जाती थी, वर्तमान हनुमान मन्दिर के परिसर के समीप ही गंगा के किनारे इनकी कुटिया थी। श्री स्वामी जी महाराज इस महिला का बहुत आदर करते थे, धवल वस्त्र धारिणी यह वृद्धा नित्य ही अपने फलाहार हेतु दूध और आलू की भिक्षा प्राप्त करने के लिए ऋषिकेश-स्थित काली कमली क्षेत्र पैदल ही जाया करती थी और अपना अधिकांश समय भजन में ही व्यतीत करती थी। कुटिया उनकी अपनी सम्पत्ति थी। इस माई का एक

संकल्प था जिसको कि वह कई बार व्यक्त कर चुकी थी। उसका संकल्प था कि श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज स्वयं अपने हाथोंह्नसे मेरा अन्तिम संस्कार गंगा में अर्पित कर पूर्ण करें। महाराज के सामने जब यह बात कहती थी तो स्वामी जी सदैव कहा करते थे, ''माताजी, मैं तो अधिकतर बाहर दौरे पर रहता हूँ और कभी भारत से भी बाहर रहता हूँ, आप ऐसे संकल्प मत धारण करो।'' परन्तु नारायणी माई सदैव उनको स्मरण कराती रहती थी, ''नहीं, यह कार्य आपको अपने हाथोंह्नसे करना है।'' और संकल्प की पूर्ति इस रूप में हुई कि परम धाम सिधारने से एक दिन पूर्व ही वह श्री स्वामी जी महाराज से मिलने के लिए आयी। वह अक्सर मिलने आया करती थी, स्वामी जी उसकी बहुत-सी आवश्यकताओं की पूर्ति बिन माँगे ही कर दिया करते थे, परन्तु अपनी इस माँग के प्रति वह इतनी जबरदस्त आश्वस्त थी कि नहीं, यह कार्य आपको ही पूर्ण करना है। उन दिनों स्वामी जी महाराज की निजी सेवा में श्री विमलानन्द जी और श्री नागरकर जी हुआ करते थे। उन्होंने सोचाह्नह्नमाई तो आती ही रहती है। स्वामी जी कार्य में व्यस्त रहते हैं। व्यवधान न पड़े, इसलिए कह दिया, ''माताजी, स्वामी जी बहुत व्यस्त हैं, आज नहीं मिल सकते।'' वह मिलने की जिद करती रही और अन्त में निराश हो कर कुटिया पर वापस चली गयी। दूसरे दिन किसी ने आ कर महाराज को सूचना दी कि स्वामी जी नारायणी माई तो महाप्रयाण कर गयी। तब उनको बतलाया गया कि स्वामी जी, कल वह आपसे मिलने आयी थी; परन्तु आपकी व्यस्तता को देखते हुए हमने उन्हें फिर आने के लिए कह दिया था। तब स्वामी जी ने कहा कि अरे भाई, आपने यह क्या किया, खैर जो होना था सो हुआ। महाराज ने नाव मँगा कर अपने हाथ से शरीर को उठा कर उसमें रखा और माता की अन्तिम इच्छा को पूर्ण करते हुए गंगार्पण किया। ऐसा था नारायणी माई का संकल्प! यह माता जब स्वामी जी से

मिलने आती थी तो कई बार स्वामी जी अपनी व्यस्तता के कारण उनको थोड़ा इन्तजार करने के लिए कहते थे, तो उनका उत्तर होता था, ''ना मैं जाऊँ छूँ, फिर आ जाऊँगी मेरा भजन में खोटी होव छ।'' अपने भजन के प्रति बहुत ही समर्पित महिला थी, नारायणी माई।

ऐसे ही एक वृद्ध संन्यासी, महाराज की कुटिया के समीप ही दूसरी कुटिया में निवास करते थे। वह नागपुर (महाराष्ट्र) के निवासी थे। कुटिया का लागत-धन उन्होंने आश्रम को अदा कर किया था। वह आश्रम का भोजन भी नहीं करते थे, फलाहार करते थे अथवा स्वयं ही कुछ व्यवस्था कर लिया करते थे, जल भी अपने लिए स्वयं गंगा जी से ले कर आते थे, सदैव राम राम राम राम जपा करते थे। इनका नाम मुझे इस समय स्मरण नहीं आ रहा। आश्रम से कोई वस्तु नहीं लेते थे, फिर भी उनके मन में एक भाव था कि हम आश्रम में निवास करते हैं, अतएव आश्रम की कुछ सेवा करना हमारा कर्तव्य है। इसलिए पोस्ट आफिस से डाक ले कर प्रत्येक की कुटिया पर पहुँचा देते थे। यह थी उनकी निष्काम सेवा! श्री स्वामी जी महाराज के प्रति उनके मन में अगाध श्रद्धा थी, प्रेम इतना कि स्नेह से महाराज को अपना लड़का कहते थे, बात-बात में पूछते थे, ''अरे भाई, हमारा लड़का कहाँ है? आज कहाँ गया? हमेशा इधर-उधर जाता रहता है। हम ऐसे ही चले जायेंगे, ये हमको मिलेगा भी नहीं।'' इसलिए उन्होंने स्वामी जी को एक बार कहा कि जाने से पहले हमको मिल कर जाया करो। इसके बाद स्वामी जी सदैव उनको मिल कर बातचीत कर अपना कार्यक्रम बतला कर जाया करते थे, और अन्त में एक बार जब स्वामी जी को लगा कि शायद यह अन्तिम भेंट है तो महाराज उनको अच्छी तरह मिल कर पुष्पमाला पहना कर गये, तब उन्होंने भी कहा कि अब हम नहीं मिलेंगे, और ऐसा ही हुआ भी। इन महाराज का नाम था हरि ॐ स्वामी जी, स्वामी

हरिओमानन्द। जहाँ तक मेरा व्यक्तिगत प्रश्न है महाराज की कृपा मुझ पर, मेरे पारिवारिक जनों पर, बड़ों पर, छोटों पर सदैव बनी रही है। सुख में, दुःख में सदैव आपकी कृपा ही हमारा सम्बल रही है।

हमारी चार पीढ़ी को आपके चरणों में अपना मस्तक नमन करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मेरे पूज्य पिता जी को आप बड़े भाई के समान आदर प्रदान करते थे। मेरे चाचा जी को आपका बड़े भाई तुल्य स्नेह प्राप्त रहा है। अनेकों बार महाराजश्री चाचा जी को मिलने आने का कार्यक्रम बनाया करते थे, आप कितने उदारमना हैं। कभी भी ये विचार उनके मन में नहीं आया कि लोग मुझसे मिलने आते हैं, मुझसे मिलने के लिए समय माँगते हैं और मैं एक अत्यन्त साधारण से व्यक्ति से मिलने के लिए जाऊँ। पिताजी की अस्वस्थता के समय में अनेकों बार महाराज स्वयं मिलने के लिए आये और उन्हें धैर्य प्रदान किया।

मेरा रोम-रोम आपका ऋणी है। यह शरीर आज आपकी कृपा से ही स्वस्थ है। यदि सही कहूँ तो मैं जीवित ही आज आपकी कृपा के कारण हूँ, बिन माँगे ही आपने बहुत-कुछ दे दिया है। जिस गृह में आजकल हम निवास करते हैं, इसकी आधारशिला आपके कर-कमलों से रखी गयी थी और बिना किसी कार्यक्रम के, बिना पूर्व-सूचना के एक दिवस आप मसूरी एक्सप्रेस से हरिद्वार पहुँच कर आश्रम में निर्धारित कार्यक्रमानुसार एक भवन का शिलान्यास करने वाले थे, परन्तु ट्रेन इतनी लेट हो गयी कि शिलान्यास का समय ही निकल गया। हरिद्वार स्टेशन पर उतरते ही जब आपने समय पूछा, और आपको समय बतलाया गया तो आपने कहा कि, अरे! शिलान्यास का तो समय निकल गया, तब स्टेशन पर वेदप्रकाश जी ने आपको बतलाया कि कोई बात नहीं स्वामी जी, जो कार्यक्रम आपने

आश्रम में सम्पादित करना था वह कार्य यहाँ कर लीजिए, सो कैसे, तब उन्हें बतलाया गया कि आज यहाँ हम लोग बिल्वकेश्वर नगर में भूमि-पूजन का कार्य कर रहे हैं, और यह कार्य आपके कर-कमलों से सम्पन्न हो जाये तो कितना उत्तम रहेगा! कुछ विचार कर महाराज ने कहा कि मैं पाँच मिनट से अधिक समय नहीं दूँगा, ओमप्रकाश का कार्य है वह भी इसलिए। महाराज की कृपा से हमारे गृह की आधारशिला रखी गयी। इस प्रकार महाराज ने पूर्ण कृपा की। और इतना ही नहीं जब यह गृह बन कर तैयार हो गया और मुहूर्त के अनुसार हमने पूजा आदि सम्पन्न कर ली, फिर भी हम इसमें निवास करने नहीं आये; क्योंकि मेरी धर्मपत्नी श्रीमती सरस्वती की एक प्रबल इच्छा रही कि स्वामी जी इसमें आ कर पहले कुछ ग्रहण करें, तब हम लोग निवास करने आयें। भगवान् की कृपा और महाराज की दया इस प्रकार हुई कि एक दिन बरेली से ब्रिगेडियर श्री सब्बरवाल जी द्वारा प्रेषित एक समाचार मुझे रायवाला कैन्ट से आये दो मिलिट्री के जवानों से प्राप्त हुआ कि श्री स्वामी जी महाराज कल सुबह हरिद्वार पहुँच रहे हैं। वह ट्रेन से उतर कर गंगा-स्नान के लिए अपने निर्धारित स्थान पर जायेंगे तथा वहाँ से गंगा-स्नान के उपरान्त ओमप्रकाश के नव-निर्मित गृह में चाय-पान करेंगे तथा दिवस का शेष समय टूरिस्ट बँगला, हरिद्वार में व्यतीत करेंगे, यह सब तुम्हारे सूचनार्थ है। पत्नी का आग्रह था कि मैं श्री स्वामी जी से ऐसा अनुरोध करूँ कि महाराज आप आ तो रहे ही हैं, कृपा कर अपने चरणों की रज से इस नव-गृह को पवित्र कर दें। मैंने कहा कि मैं महाराज के निर्धारित कार्यक्रम में व्यवधान नहीं उत्पन्न किया करता। इस कार्य के लिए महाराज से प्रार्थना कर कार्यक्रम बनाऊँगा, तब यह कार्यक्रम सम्पन्न किया जायेगा। परन्तु कैसी विचित्र लीला है कि जो हम लोगों ने अपने मन में सोचा, कल्पना ही की और महाराजश्री ने बिना माँगे ही इस कार्य को मूर्त

रूप प्रदान कर दिया। ऐसी कृपा अनेकों बार हम पर की है। हम तो कृपा-सिन्धु के इतने आभारी हैं कि कृपा के आभार को प्रकट करने के लिए हमारे पास शब्द ही नहीं हैं, केवल कुछ भाव हैं, जिन्हें भाव वाला ही समझ सकता है।

श्री स्वामी जी महाराज कुछ वर्षों से ग्रीष्म काल में एकान्त-वास तथा अपने भजन-ध्यान के लिए गंगोत्री जाया करते हैं। मेरे भी मन में विचार आया कि एक बार मैं भी कुछ समय महाराजश्री के सान्निध्य में गंगोत्री में निवास करूँ। अपनी इस इच्छा को मैंने महाराजश्री के एक व्यक्तिगत सेवक के समक्ष व्यक्त किया कि इस बार जब आप स्वामी जी महाराज के साथ गंगोत्री-प्रवास के लिए कार्यक्रम बनायें तो मेरे लिए भी श्री स्वामी जी महाराज से आज्ञा ले लीजिएगा। इस पर उनका उत्तर था कि स्वामी जी यहाँ से गंगोत्री जाते समय आश्रम से किसी को साथ नहीं लेते, और यदि लेते भी हैं तो वह किसी के कहने से नहीं, स्वयं अपनी इच्छा से लेते हैं। इस पर मैंने कहा कि यदि कोई महाराज को गंगोत्री जाने वाले मार्ग पर खड़ा मिल जाये और साथ चलने का आग्रह करे तो क्या महाराज मना कर देंगे, तब उन्होंने कहा कि यदि इतनी प्रबल इच्छा है, तो स्वयं महाराज से क्यों नहीं कहते? सदैव की भाँति इस बार स्वामी जी के आगमन पर उनके दर्शन करने हरिद्वार स्टेशन पहुँचा, ट्रेन से उतर कर महाराज ने चण्डीदेवी और मनसादेवी को प्रणाम किया, थोड़ी देर प्रार्थना की, कीर्तन किया और आश्रम प्रस्थान करने के लिए जैसे ही कार की ओर चले तो उन सेवक ने कहा कि स्वामी जी कल गंगोत्री जा रहे हैं, चलना है तो पूछ लो। मैंने कहा कि यहाँ स्टेशन पर पूछना उचित नहीं समझता, आप बात कर लेना अथवा मैं आश्रम आ कर आज्ञा लूँगा। उन्होंने बतलाया कि इतना समय नहीं है, कल जाना है और आज सारा दिन स्वामी जी बहुत व्यस्त हैं।

फिर भी मैंने स्टेशन पर कुछ कहना उपयुक्त नहीं समझा। कार चलने से पूर्व उन्होंने ही कहाह्वह्व Swamiji, Om prakash wants to come to Gangotri, Yes! he can come, Swamiji Replied. (स्वामी जी, ओमप्रकाश गंगोत्री आना चाहता है। 'हाँ! वह आ सकता है,' स्वामी जी ने उत्तर दिया)। और फिर मुझे पास बुला कर ऐसे समझाया कि जैसे कोई पिता अपने छोटे-से बालक को समझाता हैह्वह्वक्या-क्या साथ लेना है, और वहाँ किस प्रकार रहना है, समय का सदुपयोग किस प्रकार करना है, आदि। इस प्रकार महाराज की कृपा का आनन्द गंगोत्री-प्रवास में प्राप्त हुआ। गुरुपूर्णिमा से एक दिन पूर्व महाराज के साथ ही बस द्वारा आश्रम पहुँचे, गुरुपूर्णिमा का महोत्सव आश्रम में बड़े श्रद्धाभक्तिपूर्वक मनाया गया। इस उत्सव का आनन्द और महाराज से प्रसाद प्राप्त कर घर वापस लौट आया।

उपदेश-सार

महाराजश्री ने सदैव अपने सभी भक्त जनों को आनन्द में रहने का गुर बतलाया है, चाहे वह किसी भी वर्ण, धर्म, जाति या सम्प्रदाय के क्यों न हों। आपके इस प्रिय भजन में आपके उपदेशों का सार हैह्वह्व''चिदानन्द चिदानन्द चिदानन्द हूँ, हर हाल में अलमस्त सच्चिदानन्द हूँ। राधारमण राधारमण राधारमण कहो, जिस देश में, जिस वेश में, जिस धाम में रहो, राधारमण राधारमण राधारमण कहो। जिस योग में, जिस भोग में, जिस रोग में रहो, राधारमण राधारमण राधारमण कहो'' आदि, ''सदैव उस परम पिता का स्मरण करते रहो। यह मानव-देह उसने तुम्हें प्रदान की है। यह मनुष्य-जन्म दुर्लभ है। इसका सदुपयोग करो, भगवान् का स्मरण करते हुए, प्राणी-मात्र की सेवा करो, यही उनके उपदेशों का सार है। अपने से बड़ों का आदर करो, छोटों से स्नेह और सम्मान का व्यवहार करो,'' ऐसा केवल आपका कथन ही नहीं है, बल्कि सदैव आपने अपने जीवन द्वारा मार्ग-दर्शन

किया है। महाराज को समय की धारा पर पाँव रखना सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज ने सिखला दिया था, और महाराजश्री ने अपनी आगे आने वाली पीढ़ी को यह रहस्य बतलाया है। समय-समय पर भगवद्-कृपा से सन्त जन, गुणी जन, ज्ञानी जनों का प्रादुर्भाव इस धरातल पर होता रहता है। कभी सद्गुरु भगवान् शंकराचार्य, कभी वल्लभाचार्य, कभी रामानुजाचार्य, कभी रामकृष्ण परमहंस, कभी विवेकानन्द और श्री स्वामी शिवानन्द तथा श्री स्वामी चिदानन्द इन सभी महापुरुषों ने समय की धारा पर अपने पाँव रखे हैं। आज तक इनके चरण-चिह्न, कदमों के निशान दिखलायी पड़ते हैं। समय-काल इनको मिटा नहीं सका, तभी तो आज तक संसार में गुणी जन इनके बतलाये मार्ग पर चल कर अपना तथा जगत् का कल्याण कर रहे हैं। भगवान् की कृपा सदैव हम सब पर बनी रहे! श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज का वात्सल्यमय प्रसाद सारे मानव-जगत् को प्राप्त हो, सभी प्राणियों पर आपकी कृपा की वर्षा होती रहे, इस धरा धाम के वासी आपकी उपस्थिति सदैव अपने बीच पाते रहें, यही प्रार्थना है।

ॐ तत्सत्!

संक्षिप्त

मैंने महाराज श्री स्वामी चिदानन्द जी को देखा है मन्दिर में पुजारी बन कर पूजा करते, जंगल से बिल्व-पत्र और फूल लाते, डिस्पेंसरी में रोगियों की सेवा करते, घायल व्यक्तियों की मरहम-पट्टी करते, इंजेक्शन लगाते, कुष्ठरोगियों की सेवा करते, और देखा है माँ गंगा को प्रणाम कर जल में कूदते, तैरते, जैसे बालक माँ की गोद में क्रीड़ा कर रहा है, खेल रहा है। निष्काम सेवा का पाठ अपने सामने वालों को (साधकों को) सिखाते जैसे भवन-निर्माण के लिए ईंट ढोते, पाकशाला (किचन) के लिए गंगा जी से पानी भरते, लंगर के लिए लकड़ी पहुँचाते, डिवाइन लाइफ मैगजीन को डिस्पैच के लिए तैयार करते, फावड़ा चलाते, आश्रम के सभी प्रकार के निर्माण में हाथ बँटाते, नगर-संकीर्तन करते, नाटक में भाग लेते और नाटकों का दिग्दर्शन करते, जादू के खेल दिखाते, और देखा है कुत्ते और बिल्ली को एक ही बर्तन में खाना खिलाते, देखा है बन्दर को इनकी आज्ञा का पालन करते, जिसे ये प्यार से ऋषिराम कह कर पुकारते थे, गऊ माता को प्रणाम करते, उनकी सेवा-शुश्रुषा का ध्यान करते, विश्वनाथ बाग की देख-रेख और साज-सँवार करते, और देखा है साइकिल चला कर आश्रम की विभिन्न प्रकार की सेवा करते, अध्यक्ष-पद ग्रहण करने के उपरान्त भी साइकिल से नित्य ऋषिकेश विश्वनाथ बाग आते-जाते, गंगा पार स्वर्गाश्रम स्थित जज साहब गौरीशंकर जी महाराज के सान्निध्य में बैठ कर विचार-विमर्श करते, देखा है सन्तों के समीप बैठ कर सन्मार्ग पर चलने की चर्चा करते, मुनिकीरेती में सफाई कर्मचारी से प्रेम से वार्ता करते और देखा है भारत के राष्ट्रपति के साथ वार्ता करते और दोनों को ही सम्मान और

आदर प्रदान करते, समान भाव के साथ 'समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।' श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज ने सदैव अपने ओठों की जगह अपने जीवन के कार्यों द्वारा धर्मोपदेश दिया है अर्थात् कृत्य, शब्दों की अपेक्षा अधिक प्रभावी होते हैं, अतएव हम जो कहना चाहते हैं, उसे करके दिखायें।